दिव्य धारा

परमसंत डॉ. करतार सिंह जी साहब
के अनमोल वचन

Scanned by CamScanner

ब्रह्मलीन सद्गुरु डॉ. करतार सिंह जी साहब

(जन्म: 13 जून 1912; निर्वाण: 15 जून 2012)

अहंकार से प्रभु नहीं मिलते, चाहे कोई भी साधन करिए
दीनता को तो अपनाना ही होगा।

Scanned by CamScanner

दिव्य धारा

परमसंत डॉ. करतार सिंह जी साहब के
संत प्रसादी से उद्धृत कुछ महत्वपूर्ण उपदेश

रामाश्रम सत्संग (रजि.)
गाज़ियाबाद

Scanned by CamScanner

प्रकाशक
अधयक्ष एवं आचार्य, रामाश्रम सत्संग (रजि.)
वर्तमान मुख्यालय, ग़ाज़ियाबाद (उ.प्र.)

सर्वाधिकार सुरक्षित
प्रथम संस्करण 1000 प्रतियाँ (2015)

मूल्य
मात्र रु. 30/- (तीस रुपये)

प्राप्ति स्थान
व्यवस्थापक, राम संदेश पत्रिका
9-रामाकृष्णा कॉलोनी, जी.टी. रोड, ग़ाज़ियाबाद

मुद्रक
अंकोर पब्लिशर्स प्रा. लि.
बी-66, सैक्टर-6, नोएडा (उ.प्र.)

Scanned by CamScanner

प्रस्तावना

परम पिता परमेश्वर की कृपा से समय-समय पर इस धरती पर अनेक महान विभूतियाँ मनुष्य के उत्थान के लिये अवतरित होती रही हैं। इन्ही विभूतियों में से एक इस सदी के महान संत, हमारे परम पूज्य गुरुदेव, परमसंत डॉ. करतार सिंह जी महाराज भी हैं। आप एक ऐसी दिव्य आत्मा के रुप में प्रकट हुए जिनका सम्पूर्ण जीवन आध्यात्मिक उन्नति और दीनता की पराकाष्ठा की एक अद्भुत मिसाल है। आज गुरुदेव स्थूल रुप में मौजूद नहीं हैं लेकिन सूक्ष्म रुप में उनकी उपस्थिति का भान हर समय हर जगह किया जा सकता है।

आपने आजीवन गृहस्थ धर्म का पालन करते हुए आध्यात्म विद्या को आज के परिवेश में जीवन के विभिन्न पहलूओं द्वारा बहुत ही सरलतापूर्वक समझाया है। आपके प्रवचनों में आध्यात्मिक ज्ञान, वाणी की मधुरता, भाषा शैली और अभिव्यिक्ति की क्षमता की एक अभूतपूर्व मिसाल मिलती है। जब-जब आपके श्रीमुख से प्रवचनों को सुनने का अवसर मिलता तो ऐसा प्रतीत होता था कि मानों एक दिव्य धारा का प्रवाह चल रहा है। लगभग हम सभी ने, अनेकों बार इस दिव्य धारा के प्रवाह को अवश्य महसूस किया होगा।

गुरुदेव के प्रवचन संत-प्रसादी में छपे हैं जिसके बारह अंक अब तक प्रकाशित हो चुके हैं। इनमें से पहले छः अंकों में प्रकाशित प्रवचनों के कुछ महत्वपूर्ण अंश 'दिव्य-धारा' नामक पुस्तक में संकलित किये जा रहे है। इस पुस्तक में गुरुदेव ने हमारे जीवन का मुख्य उद्देश्य क्या है, इसकी पूर्ति हेतु हमें क्या और कैसे करना चाहिए व इस रास्ते में आने वाली कठनाईयाँ तथा उनके निवारण हेतु उपाय को बड़ी ही सरल भाषा में समझाया है।

प्रयास किया गया है कि गुरुदेव द्वारा कहे गये एक-एक शब्द को जहाँ तक संभव हो, उन्हीं की भाषा में प्रस्तुत किया जाये। हो सकता है कि पाठकों को लगे कि कहीं-कहीं उनके उपदेशों की पुनरावृति हुई है, किन्तु

Scanned by CamScanner

यदि ध्यानपूर्वक पढ़ा जाय तो आप महसूस करेंगे कि गुरुदेव ने अपने उपदेशों में कुछ बातों को बार-बार भिन्न-भिन्न प्रकार से समझाने का प्रयास किया है।

'दिव्य धारा' हर नये और पुराने अभ्यासी के लिए प्रेरणा का एक स्रोत ही नहीं अपितु एक वरदान है, जिसे जितनी बार पढ़ा जाये कम है। गुरुदेव बार बार श्रवण, मनन और निध्यासन पर ज़ोर देते थे और इस पुस्तक का मुख्य उद्देश्य भी यही है। यदि हम इस पुस्तक में बताये गये उनके उपदेशों को आत्मसात कर अपने जीवन में उतार सकें तो शायद कुछ हद तक हम वैसे बन सकें जो वे हमें बनाना चाहते थे। मेरी गुरुदेव के चरणों में प्रार्थना है कि हम सभी सत्संगी भाई बहन इस पुस्तक का जितना हो सके लाभ उठायें और अपना जीवन सार्थक करने का प्रयास करें।

-डा. शक्ति कुमार सक्सेना
अध्यक्ष एवं आचार्य
रामाश्रम सत्संग, गाज़ियाबाद

Scanned by CamScanner

परमसंत डॉ. करतार सिंह जी साहब के अनमोल वचन

संत प्रसादी भाग-1 से उद्धृत

जैसा हम कर्म करते हैं, वैसा उसका फल मिलता है।

❖ ❖ ❖ ❖

अज्ञान के कारण जो कर्तापन और भोक्तापन का भाव है, वही सब मानसिक बिमारियों का कारण है।

❖ ❖ ❖ ❖

हम जो कुछ करते हैं, उसमें सोचते हैं कि "मैं ही कर्ता हूँ"। हमारे मन में जब तक कर्ताभाव और भोक्ता भाव रहेगा तब तक कर्मों का चक्र और जन्म मरण का चक्र चलता ही रहेगा और हम भवसागर से कभी भी पार नहीं उतर पायेंगे, मुक्त नहीं होंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

जो आत्मा के गुण हैं, परमात्मा के गुण हैं, वे व्यवहार में होने चाहिए। साधन तो यही है कि हम आत्मा हैं, इस आत्मा को पहचान कर संसार में रहें और अपना नित्य व्यवहार करें।

❖ ❖ ❖ ❖

आत्मस्थित हो कर जो कार्य हमारे द्वारा होगा उसका प्रभाव हमारे चित्त पर नहीं पड़ेगा। उसका अक्स हमारे चित्त पर पड़ेगा, उसकी छाया हमारे चित्त पर नहीं पड़ेगी तो हमारा चित्त निर्मल रहेगा और कर्म फल नहीं बनेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर 'सत्' स्वरूप है। मनुष्य के भीतर में आत्मा बैठी है वह भी सत् स्वरूप है, उसको पहचानो और अपने आप को जानो।

❖ ❖ ❖ ❖

संतोष वही कर सकता है जिसके भीतर में सहनशीलता और ज्ञान हो। ज्ञान और अज्ञान, वैराग्य और अनुराग दोनों से मुक्त हों।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

शान्ति वह है जिसके साथ पूर्ण तृप्ति हो, कोई इच्छा न हो, कोई आशा न हो। जिस परिस्थिति में रहें शांत रहें। यह आत्मा का स्वरूप है। मन की शांति अस्थायी है, क्षण भंगुर है। आत्मा की शांति तो निरन्तर रहती है, गंगा प्रवाह की तरह।

❖ ❖ ❖ ❖

कितनी भी दुखद घटना आ जाये, कितना ही सुख आ जाये, हमारी समता भंग न हो। जब तक समता नहीं बनेगी, मानसिक संतुलन नहीं बनेगा, तब तक सच्ची शांति नहीं मिलेगी।

❖ ❖ ❖ ❖

संसार में रहते हुए हमें उत्तेजना, प्रकोप, शत्रुता, आक्रमण आदि का सामना करना पड़ेगा, दुख और तकलीफें आयेंगी, परन्तु जीवन की कला यह है कि हम कमल पुष्प की तरह रहें, सदा खिले हुए रहें। चित्त पर किसी प्रकार की छाया अंकित न हो।

❖ ❖ ❖ ❖

यह तो संसार है। इसमें सब ओर से उत्तेजना मिलेगी ही। बाहर के लोग तो हमें फिर भी कम उत्तेजना देते हैं परन्तु परिवार के लोग ज़्यादा उत्तेजना देते हैं। तितीक्षा का अभ्यास करना चाहिए, संतोष को अपनाना चाहिए। सहनशीलता को अपनाना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

अपना आत्म निरीक्षण करते रहना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

अपनी कोई इच्छा न रखें, अपने आप को मृतक सरीखा बना लें। जीते जी मरना सीखें।

❖ ❖ ❖ ❖

भीतर में तनिक भी अहंकार न रहे – मेरापन न रहे। "...तू...तू" की रट रहे और इसी रट में उस सर्वोच्च स्थिति में पहुँच जाएं जहाँ का वर्णन करने के लिये शब्द नहीं होते। यह स्थिति रोम रोम में बस जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

अपने आप को भीतर में साफ करते चले जायें, निर्मल, निर्मल से भी निर्मल।

❖ ❖ ❖ ❖

परमात्मा ही ज्ञान का भंडार है। वह ही सुखों की खान है। उस भंडार से बिलगाव ही हमारे दुखों का कारण है।

❖ ❖ ❖ ❖

'दर्शन' केवल यह नहीं है कि भगवान की किसी मूर्ति का दर्शन कर लें। मूर्तियों के दर्शनों को महापुरुषों ने और शास्त्रों ने 'दर्शन' नहीं माना है, बल्कि उनका 'दर्शन' यह है कि मेरे और मेरे प्रियतम परमात्मा में कोई फर्क न रहे। 'दर्शन' का मतलब यह है कि भगवान के चरणों में जायें तो उसकी चरण रज बन जायें। उसी अवस्था में आने पर भीतर से आवाज़ आती है "तन में राम ...मन में राम ...रोम रोम में राम ही राम, जल में राम, थल में राम, वायु में राम।

❖ ❖ ❖ ❖

'दर्शन' का अर्थ है कि जो गुरु है, परमात्मा है, हम भी वैसे बन जाते हैं। तब हमें समझना चाहिए कि हमें दर्शन का लाभ प्राप्त हो गया।

❖ ❖ ❖ ❖

जिन्होंने अपने आप को अपने संत सदगुरु के चरणों में अर्पित कर दिया है, वे सुख के साथ सोते हैं, उन्हें कोई चिन्ता नहीं। उनकी चिन्ता करने वाला कोई और है।

❖ ❖ ❖ ❖

बाहर में इन्द्रियों पर नियंत्रण रखना आवश्यक है। कम बोलना चाहिए, आवश्यक होने पर ही बोलें, वर्ना चुप रहें। अधिक बोलने पर बात का वज़न घटता है और बहुधा लोग मानते भी नहीं। वाणी के संयम से ओज बढ़ता है और लोग उसे मान भी लेते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

अभ्यास करते रहें कि विचार तभी उठें, जब हम चाहें, अन्यथा शांत रहें। हर साधक का कर्तव्य है कि वह जीवन के लक्ष्य के प्रति जागे और उस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये जो-जो साधन अनुकरणीय हों, उन्हें पूरा करने में पूरी निष्ठा के साथ, तन मन और वचन से जुट जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

और कुछ नहीं कर सकते तो कम से कम अपने विचारों को तो कम करें और चिंतन का अभ्यास करते करते शून्य हो जायें। अगर कोई व्याकुलता हो भी तो एकमात्र भगवान के दर्शन की ही हो।

❖ ❖ ❖ ❖

साधक को बालकपन के स्वभाव का अनुकरण करना चाहिए। ईश्वर कृपा के अनुभव में जब भी विचार उठें, उन्हें बंद करिये। साँस जो चल रही है, उसकी अनुभूति करिए तथा अंतर में प्रकाश का पुंज जो दिखे उसी में अपने आप को लय कर दीजिये।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रभु चरणों में पहुँचने का सरलता ही एकमात्र साधन है। बच्चों की तरह हमें सरल बनना है। तभी प्रभु चरणों में पहुँचने के अधिकारी बन सकते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

सबके लिये आवश्यक है कि त्याग करें। त्याग भी किसका? अपनी आकांक्षाओं का, अपनी वासनाओं का, अपनी मान बढ़ाई का तथा नाम बरी का।

❖ ❖ ❖ ❖

अपनी सबसे प्यारी चीज़ का बलिदान करना, अपने इष्ट के चरणों में सदा सदा के लिए अर्पण कर देना, और मोह व ममता की डोर को सदा के लिए तोड़ देना, यहाँ तक कि उसकी याद भी न रह जाये, यही 'बलि' कहलाती है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

"मैं" का अहंकार जब तक पूर्ण रूप से नहीं निकलेगा तब तक इष्ट की सच्ची अनुभूति संभव नहीं।

❖ ❖ ❖ ❖

'गीता' हमें जीते जी मरना सिखाती है। बिना मरे या अहंकार के समूल रूप से नष्ट हुए भगवान की भक्ति नहीं बन सकती।

❖ ❖ ❖ ❖

हर साधक का यह पुनीत कर्त्तव्य है, धर्म है, कि वह संतमत के उसूलों पर चल कर परमात्मा का साक्षात्कार करे और दुनिया के सामने अपने आप को नमूने के रूप में खड़ा करे। जैसे दवा से फायदा होने पर मरीज़ का विश्वास उस दवा पर बढ़ जाता है, उसी तरह आपको परमात्मा प्रेम में सराबोर देख कर हर जिज्ञासु और दुनियादार आपके सिद्धान्तों में विश्वास ला सकेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

पहले प्रसाद को परम पिता परमात्मा के चरणों में बड़ी दीनता के साथ अर्पित करना चाहिए। प्रसाद को जब बाँटा जाये तब बाँटने वाला अपने इष्टदेव में लय हो कर बाँटे। जो भी प्रसाद को ले वह अपने गुरुदेव, इष्टदेव के ध्यान में लय होकर प्राप्त करे। ऐसे प्रसाद से रोगियों के रोग तक ठीक हो जाते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

सत्संग में जब तक बैठें कम से कम तब तक तो शांत रहें। ईश्वर की जो कृपा बरस रही है उसका अनुभव यहाँ करें और उसी भावना से घर लौटें।

❖ ❖ ❖ ❖

"प्रेम" प्रतीक्षा में है। साधना यही करनी है कि प्रेम स्वरूप परमात्मा के चरणों में प्रेममय होकर यह मन स्थिर हो कर बैठे।

❖ ❖ ❖ ❖

विचार ही हमारी आत्मा और परमात्मा के बीच की दीवार है। अभ्यास करना है कि भीतर में विचार न उठें या कम से कम उठें। साधना यही करनी है कि मन हमारे अधीन हो जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

मन परमपिता परमात्मा ने हमें बड़ा विचित्र उपकरण प्रदान किया है। इसका सद्उपयोग करना है। आवश्यकता हो तो विचार उठा लिया, नहीं तो इसको शांत रखना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

जागृत अवस्था में ही सुषुप्ति की अवस्था में रहना है। जागृत सुषुप्ति को अपनाना है क्योंकि इस जागृत सुषुप्ति में ही प्रभु की प्राप्ति होती है। जब तक हमारी जागृत सुषुप्ति अवस्था नहीं होती तब तक परमात्मा के साथ हमारी तदरूपता नहीं होती। हमें अपने आपको तनाव मुक्त करना है।

❖ ❖ ❖ ❖

हम अपने आपको पूर्णतः उस प्रेमास्पद के चरणों में समर्पित कर दें, आप देखेंगे आपके भीतर एक अजीब तरह की शांति और आनंद की अनुभूति कुछ समय बाद होने लगेगी।

❖ ❖ ❖ ❖

संसार के प्रति पकड़ को ढीला छोड़ दें। जो अतीत में हो चुका है उसे क्यों पकड़े। भूल जाइये बच्चों की चिंता माँ बाप को होती है। यदि परमात्मा में विश्वास है तो कल के लिये चिंता क्यों? यह हमारी भूल है, नासमझी है हमारी। ईश्वर की गोद में बच्चों की तरह बैठना है। वह हमारा सच्चा पिता है। पिता के रहते बच्चों को चिंता की क्या आवश्यकता?

❖ ❖ ❖ ❖

हमें वर्तमान में ही प्रभु की कृपा को पाना है। यही आध्यात्मिक उन्नति का समय है। इसलिये बाकी सब छोड़ कर प्रभु चरणों का वर्तमान में ही आश्रय ले लें।

❖ ❖ ❖ ❖

यदि किसी से हमारी शत्रुता है तो उसे क्षमा कर दें। क्षमा ही परमात्मा का स्वरूप है। परमात्मा का गुण है क्षमा, यह आपका स्वभाव बन जाये, आपकी दीनता में कोई कितनी ही उत्तेजना दे, शत्रुता करे, आप क्षमा कर दें।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

यदि आप सत्संगी हैं और सत्संगी अपने आप को समझते हैं तो इन विचारों से ऊपर उठना होगा। सामान्य व्यक्ति से आपके व्यवहार में कुछ न कुछ अंतर होना ही चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

सत्संगी को तो बलिदान देना ही होगा, तितीक्षा अपनानी होगी।

❖ ❖ ❖ ❖

विचार विमुक्त तब तक नहीं हो सकते जब तक विकार मुक्त नहीं होंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

वास्तविक लाभ तब मानना चाहिए जब हमारे भीतर में वही गुण समा जायें जो ईश्वर में होते हैं। ईश्वर की पूजा, गुरु की पूजा या इष्ट पूजा यही है। उनके गुणों को सराहें और उन गुणों को अपनाने का प्रयास करें। गुरु दर्शन, ईश्वर दर्शन यही है कि ईश्वर, गुरु या इष्ट के जो गुण हैं वह सब हमारे में समा जायें।

❖ ❖ ❖ ❖

आत्मा परमात्मा में इतना ही अंतर है, जीव और परमात्मा में इतना ही अंतर है कि जीव उसका अंश है। केवल मात्रा में अंतर है, गुणों में नहीं।

❖ ❖ ❖ ❖

कोशिश करनी चाहिए कि हम निर्विचार हों और निर्विकार हों।

❖ ❖ ❖ ❖

पूजा से पहले प्रार्थना करते हैं, परमात्मा के गुणों को याद करते हैं, उसके गुणों को सराहते हैं। उसके लिये वायुमंडल, वातावरण बना लिया, परमात्मा की नज़दीकी हासिल कर ली, अब उससे प्रार्थना करो, जो माँगना है माँगो। फिर उसकी प्रसादी लेने के लिये अपने आप को उसको समर्पित कर दो। उसकी कृपा की गंगा में स्नान करो, डुबकी लगाओ।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

जैसे सागर की गहराई में जाकर मोती निकाले जाते हैं उसी तरह अपने इष्टदेव के वचनों की गहराई में जाना चाहिए। जितना आप इष्टदेव की वाणी का मनन करेंगे, उतना ही उनके नज़दीक होते चले जायेंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

सत्संगी वही बन सकता है जो वीर हो।

❖ ❖ ❖ ❖

"वीरता को अपना कर खूब लड़ो" संसार तो कुरुक्षेत्र है, युद्ध स्थल है। प्रत्येक को लड़ना है। किससे लड़ना है? जो भीतर में हमारा मन है उस से लड़ना है। बुद्धि की चंचलता को स्थिर करना है। संतुलन में लाना है। यही हमारी लड़ाई है। जब तक इनसे लड़कर हम विजय प्राप्त नहीं कर लेते तब तक न तो हमारा व्यवहार संसार के साथ सुंदर बनेगा, न ही प्रभु के चरणों के अधिकारी बनेंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

सबके साथ मधुरता का व्यवहार करें। मधुर बोलें, प्रेम से बोलिए, प्रेम का व्यवहार कीजिये। जितनी आप सेवा करते हैं, उसका मुनासिब पैसा लीजिये, ज़्यादा नहीं।

❖ ❖ ❖ ❖

जहाँ आपका मन लगे समझ लीजिये कि या तो उस जगह आपका वहाँ रोज़ाना पूजा करने का असर है या फिर कोई संत महापुरुष वहाँ आया है और चिन्ह छोड़ गया है।

❖ ❖ ❖ ❖

हज़ार हज़ार साल के मज़ार हैं, उनके दर्शनों को जाईये। वहाँ जाकर बैठते है तो ऐसा मालूम होता है जैसे किसी ने नशा पिला दिया हो। वह संत तो शरीर रूप में वहाँ नहीं हैं, परन्तु उस स्थान को अपनी तरंगों से इतना रंग दिया है कि जो भी श्रद्धा से वहाँ आता है उसको प्रसादी मिलती है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

गम्भीरता से प्रेम की तरफ बढ़ना पड़ेगा। परमात्मा के, गुरु के गुणों को अपनाना होगा और मन पर उसका प्रकाश डालना होगा। मन को अपने अधीन करना होगा। तब जाकर ईश्वर प्रेम का संगीत बजेगा, तभी शांति और आनंद की प्राप्ति होगी।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रार्थना करने, मनन करने, आचार-विचार, व्यवहार शुद्ध करने और सद्गुणों को अपनाने तथा सद्व्यवहार के बिना रास्ता आगे नहीं चलेगा। अपने मन पर अंकुश लगाना चाहिए। मन, शरीर और इन्द्रियों पर अंकुश रखें। बुद्धि, मन, को वश में रखें और बुद्धि आत्मा और गुरु से प्रकाशित हो।

❖ ❖ ❖ ❖

एक ही व्यक्ति की सेवा नहीं करनी है, आपको सबको मिल कर सुगंधित पुष्प की तरह बनना है और अपनी सुगंधि से चारों ओर परमात्मा के नाम को फैलाना है। अपने गुरु के नाम को प्रसारित करना है।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रत्येक सत्संगी का व्यवहार सामान्य व्यक्ति से ऊँचा होना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

"सब का भला करो भगवान" आपने जो प्रार्थना सुनी, सब भाई-बहन आपस में एक परिवार की तरह मिल कर रहें। आपस में प्रेम से रहें। दूसरे के दुख को अपना दुख और दूसरे के सुख को अपना सुख समझें। दूसरों की सेवा करें, तभी तो हमारी प्रार्थना का सही मतलब निकलेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

हर काम हम प्रभु के लिये ही समझ कर करें, ऐसा करना चाहिए। जो सबका पालनहार है, हम सब उसकी संतान हैं। पिता जो करता है वह संतान के हित के लिये ही करता है, इसलिये और नहीं तो अपने परिवार में ही प्रेम से रहो। किसी के प्रति कोई हीन भावना न हो। हम सब एक ही हैं। प्रभु की संतान हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

ईश्वर के गुणों को अपनायें और जो भी काम हम सुबह से लेकर रात तक करें ईश्वर के गुणों की याद के साथ करें। इसी से हमारा उद्धार हो जायेगा। उद्धार का क्या मतलब है? हमारा मन निर्मल हो जायेगा। मन जो अशुद्ध हो गया है, चिपक गया है संसार के साथ, उससे मुक्त हो जायेगा। जिसको हम 'मोक्ष' कहते हैं वह प्राप्त होगा और हम जीवन मरण के चक्कर से छूट जायेंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

'मोक्ष' की स्थिति यही है कि कोई संस्कार न रहे, कोई इच्छा न रहे, कोई आसक्ति न रहे।

❖ ❖ ❖ ❖

हमारी वाणी में प्रेम हो। हमारे व्यवहार में प्रेम हो। सच्चे बनें, स्वयं प्रेम रूप बनें और अपने व्यवहार द्वारा ईश्वर के प्रेम को विस्तार दें। जितना हम प्रेम बाँटेंगे उतना ही यह बढ़ेगा, एक दाना भी कम होने वाला नहीं। यह कम तभी होता है जब प्रेम के वितरण में कंजूस हो जायें।

❖ ❖ ❖ ❖

अपने जीवन को प्रेममय बनाना होगा। आपके संपर्क में जो भी आये उसके साथ जो भी आपका व्यवहार है, उसमें प्रेम हो, ईश्वर के प्रेम का विकास हो। हम प्रेम में स्थिर रहें। संसार की आँधियाँ आयें, दुख-सुख आयें, परन्तु हमारे भीतर की स्थिति स्थिर रहे।

❖ ❖ ❖ ❖

वास्तव में अगर गुरु के साथ सच्चा प्रेम है तो कुछ भी करने की ज़रूरत नहीं।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु और शिष्य में जो द्वैत का भाव है, वह जाता रहे, यह ख्याल नहीं करना चाहिए कि हम दो हैं या एक हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर कृपा या गुरु कृपा जो मौन से होती है, वह प्रवचनों के द्वारा नहीं होती।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

मौन के द्वार से गुजर कर ही हम आत्मा के द्वार तक या परमात्मा के पास पहुँच सकते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

आंतरिक मौन में रहने का अभ्यास करें। एक असीम शक्ति उदय होती हैं, अन्दर में मौन रहने से।

❖ ❖ ❖ ❖

हम अपने आप को बलहीन होकर, दीन होकर प्रभु के चरणों में समर्पित कर देते हैं, कुछ आशा या इच्छा नहीं रखते, तब ईश्वर की कृपा होती है।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु भी प्रसन्न है शिष्य भी प्रसन्न है, यह सब मिलता है मौन में। आप भी थोड़ी देर संकल्प विकल्प से मुक्त हो कर, आशा निराशा छोड़ कर समर्पण भाव से मौन में बैठें।

❖ ❖ ❖ ❖

लय केवल आत्मा हो सकती है परमात्मा में।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रत्येक परिस्थिति में, चाहे अनुकूल हो अथवा प्रतिकूल हो, हमारा चित्त आनंदमय रहेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

आनन्द और सुख और सच्ची प्रसन्नता तब मिलेगी जब हम संतोष को अपनायेंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

जिज्ञासु को उदासीनता अपनानी चाहिए। उदासीन वह है जो मन से संसार से उदासीन हो जाता है। उदासीनता का मतलब है भीतर में समझ आ जानी चाहिए, ज्ञान आ जाना चाहिए कि संसार नित्य रहने वाला नहीं, तो इसके प्रति मोह क्यों होना चाहिए। आसक्ति क्यों रखें, संसार से मन को हटाकर ईश्वर से अनुराग किया जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

सभी को नमस्कार करेंगे, श्रद्धा विश्वास के साथ, तो आपके हृदय में किसी के प्रति ग्लानि उत्पन्न नहीं होगी, चाहे आपके प्रति कोई कितनी ही बुराई क्यों न करे।

❖ ❖ ❖ ❖

जब सबके साथ आपका प्रेम होगा, सबमें आप ईश्वर का रूप देखेंगे, सब कार्य ईश्वर के लिये ही करेंगे, सब रूपों को सुख, आनन्द पहुँचाने के कर्म करेंगे तो आपके चित्त में कितनी प्रसन्नता उत्पन्न होगी। यह मन का तप है।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर के साथ प्रेम करिये या जो ईश्वर के प्रेमी हैं उनकी सेवा करिये। एक ही बात है। जिस व्यक्ति के भीतर में ईश्वर के गुण व्याप्त हैं उस व्यक्ति की सेवा करिये। केवल सेवा करने से ही हमारा उद्धार हो जायेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु के पास जब सच्चा जिज्ञासु आता है तो वह अपनी सुध बुध खो बैठता है। वह प्रेम में इतना भीग जाता है कि उसके भीतर में कोई इच्छा या आशा रहती ही नहीं।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु एक आदर्श है जीवन का। आप जो कुछ भी बनना चाहते हैं, उसका आदर्श ही गुरु है। यदि उस व्यक्ति की सहायता से आपको आदर्श की प्राप्ति हो सकती है तो आप उसको अपना गुरु बना लेते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

सूफियों में पहले फना होना यानी गुरु में लय होना बताया जाता है। फना का दूसरा मतलब है अपने आप को खत्म कर देना, गुरु या ईश्वर में लय कर देना। अपना अस्तित्व खत्म करके मालिक का अस्तित्व मानना।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

यदि किसी व्यक्ति को मोक्ष प्राप्त करना है तो उसे सारे संसार का उद्धार करना होगा।

❖ ❖ ❖ ❖

आपके भीतर उस परमात्मा का अंश है जो सबके भीतर है। उस अंश का विकास अपने भीतर आपको करना है। उस आत्मा के जो गुण हैं वह अपनाने हैं। गुरु के जो गुण हैं उन्हें अपनाकर उनका विकास करना है। अपना भी उद्धार करना है और संसार का भी उद्धार करना है। आपके सम्पक्र में जो भी व्यक्ति आये उसे प्रेरणा देनी है अपने व्यवहार से कि वह भी अपने आदर्श के प्रति विचारशील होवें।

❖ ❖ ❖ ❖

आपका जीवन सदगुणों से भरा हो। संसार अज्ञान में है। अपने जीवन को आदर्शमय बना कर उसे ज्ञान का प्रकाश दें।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रत्येक सत्संगी को जागरुक होना चाहिए, सतक्र रहना चाहिए अपनी कमज़ोरियों के प्रति, त्रुटियों के प्रति। उनको दूर करने का प्रयास करना चाहिए। यही साधन है। मन की कमज़ोरियों से ऊपर उठना महान तप है। इसलिये सत्संगी को 'वीर' बनना पड़ता है। तपस्वी बनना पड़ता है, विचारशील बनना पड़ता है। आपके पास बैठने से व्यक्तियों को शांति और आनंद की अनुभूति हो।

❖ ❖ ❖ ❖

सत्संग से यह प्रसादी ले कर आपको घर जाना है कि भीतर में किसी के प्रति द्वेष की भावना न हो, किसी के प्रति ईर्ष्या की भावना न हो, किसी के प्रति घृणा की भावना न हो। सेवा का भाव हो, प्रेम का भाव रखना है। संतुलन का भाव हो, सेवा बलिदान का भाव ले कर लौटें।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु के या ईश्वर के गुणों को रोम रोम में बसा लेना यानी उसमें और ईश्वर में कोई अन्तर न रहे, यही 'दर्शन' है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

साकार की उपासना करते करते हमें निराकार में जाना है। आप कितनी भी भक्ति कर लीजिये परन्तु कोई भक्ति सफल नहीं होगी, जब तक वह निराकार में जा कर लय नहीं होगी। वह निर्गुण स्वरुप भी है और सगुण भी है।

❖ ❖ ❖ ❖

संसार के प्रति इंसान को संतुष्ट हो जाना चाहिए, परन्तु परमार्थ में संतुष्ट नहीं होना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

कैसी भी परिस्थिति हो, आपके मन की समता और आत्मा की समता एक जैसी हो। मन ने आत्मा के गुण ग्रहण कर लिये हों, तब यह समता की अवस्था आती है।

❖ ❖ ❖ ❖

चिन्तन करने से अपने इष्टदेव का स्वरुप, गुण और स्मृति में आकर धीरे धीरे आपका ही स्वरुप बन जायें। भक्ति में भी ऐसा किया जाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

शुरु में तो सगुण रूप का ध्यान करते हैं, वही सगुण रूप आगे चल कर निर्गुण हो जाता है। उनके स्वरूप को, उनके गुणों को आँखों के द्वारा हृदय में उतारना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

साधना में जिस वक्त हम बैठें उस समय हमारे भीतर में परमात्मा के या परमात्मा के जिस स्वरुप को मानते हैं, ...अपने इष्टदेव का खूब गुणगान करें। जितनी उसकी स्तुति कर सकते हैं, करनी चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

मौन में जिन गुणों को आपने सराहा है, जिनका कीर्तन किया था, वो मक्खन बन कर साकार होकर आपके चित्त में दिमाग में बसते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

शुरू में जब साधना आरम्भ करते हैं तो जब तक मन शुद्ध न हो जाये तब तक भगवान की कीर्ति का गुणगान करते रहना चाहिए। जब देखें मन शांत हो गया है, आगे बढ़ने के योग्य हो गया है, तब मौन साधना करें।

❖ ❖ ❖ ❖

परमात्मा के स्वरूप, गुणों को सराहिये, इसी का नाम कीर्तन है, संगीत है, प्रार्थना है, उपासना है। जितना सराहेंगे उतना ही लाभ होगा।

❖ ❖ ❖ ❖

समर्पण का अर्थ यह है अपनी गति को परमात्मा की गति में मिला देना। आप एक यन्त्र बन जायें, जैसे प्रभु चलायें वैसे ही यन्त्र को चलने दें।

❖ ❖ ❖ ❖

महापुरुषों ने सारे दुखों से निवृत होने की एक ही बात कही है "सर्व रोग की औषधि नाम" सब बीमारियों, सांसारिक व्याधियों की एक ही औषधि है – ईश्वर के नाम, ईश्वर प्रेम, परमात्मा की शरण लेना यानी अपने-आप को उनके चरणों में पूर्णतया समर्पण कर देना।

❖ ❖ ❖ ❖

राम की शरण लेने से, ईश्वर के चरणों के समीप होने से हमें शारीरिक और मानसिक बल मिल जाता है। बौधिक बल यानी विवेक और वैराग्य उत्पन्न हो जाते हैं और सबसे अधिक बल जो मिलता है वह यह है कि आत्मा निर्मल हो जाती है। भीतर में कुछ शांति, कुछ आनंद सा अनुभव होता है। विश्वास बढ़ता है।

❖ ❖ ❖ ❖

हम आत्मा हैं, वह परमात्मा है, वह सागर है, हम उसकी बूँद हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

'नाम' वह सरेस है जैसे लकड़ी के दो टुकड़े टूट जाते हैं तो उनको जोड़ने के लिये सरेस लगा देते हैं। 'नाम' वह है जो हमारी आत्मा को परमात्मा से मिला देता है। 'नाम' वह साधन है जिसके द्वारा हमारी आत्मा परमात्मा में लय हो जाती है और हमें निरन्तर का ज्ञान, निरंतर की अनुभूति हो जाती है कि हम तो वही हैं जो हमारे पिता हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

नाम एक ऐसी सीढ़ी है जिसमें प्रार्थना भी आ जाती है, योग भी आ जाता है, ज्ञान भी आ जाता है, उपासना भी आ जाती है। जितनी पद्धतियाँ हैं इस नाम में समा जाती हैं। 'नाम' का मतलब है ईश्वर प्रेम या वह साधना जिसके द्वारा हम अपने आपको परम-पिता परमात्मा में लय कर देते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

सारे जीवन को यानी प्रातः निद्रा से जागने के समय से रात के सोते समय तक सारा समय साधनामय बना दिया जाये। जो काम करें हाथ पाँव से, विचार द्वारा, वाणी द्वारा उसमें ईश्वर की उपस्थिति का भान होता रहे ताकि हम सचेत रहें कि हमसे कोई बुराई न हो जाये। जो भी कार्य करें अपने सच्चे पिता के प्रसन्नता के लिये करें।

❖ ❖ ❖ ❖

जितना चित्त निर्मल होता जायेगा, पुराने संस्कार धुलते चले जायेंगे एवं नये आप बनने नहीं देंगे। आनंद और शांति और सुख आपको भीतर में अनुभव होगा।

❖ ❖ ❖ ❖

जो कोई जिस प्रकार की साधना करता है उसको चाहिए कि उसमें पूरी श्रद्धा रखे और दृढ़ संकल्प के साथ परमात्मा के उस रूप को पकड़े।

❖ ❖ ❖ ❖

यदि कोई हमारा अपमान करता है तो उसको ईश्वर प्रसादी समझ कर सहन करना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

अहंकार को छोड़कर दीनता अपनानी चाहिए। दीन वही बन सकता है जो प्रतिकूल और अनुकूल परिस्थितियों में ईश्वर को भूलता नहीं और परिस्थितियों के दोनों रूपों को ईश्वर की प्रसादी समझता है।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रत्येक परिस्थिति में चाहे अनुकूल हो या प्रतिकूल, भीतर की शांति और संतुलन बना रहे।

❖ ❖ ❖ ❖

सब व्यक्ति, सब वस्तुऐं उनका अस्तित्व क्षणभंगुर है, उनका स्वरूप परिवर्तनशील है, कोई भी वस्तु, कोई भी व्यक्ति, या वस्तु नाशवान है। सिवाय परमात्मा के, कोई भी वस्तु या विचार अंतकाल तक नहीं रहेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

जब संसार का सार पता लगता है तो उसके हृदय में उदासीनता आ जाती है, ईश्वर प्राप्ति का सच्चा भेद खुल जाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

यदि तुमने किसी के साथ बुराई की है तो क्षमा माँग लो। इन संस्कारों से मुक्त हो जाओ। किसी ने आपके साथ धोखा किया है, बुराई की है उसे क्षमा कर दो।

❖ ❖ ❖ ❖

जिससे हमारा राग है यानी लगाव है उन काँटों से अपना पल्ला छुड़ा लेना चाहिए। जहाँ द्वेष है वहाँ क्षमा कर देना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

'नाम' का मतलब है कि जिस तरीके से भी हो, हमारा ईश्वर से प्यार हो जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

नाम और नामी में कोई अंतर नहीं है और यह सत्य है। नाम में समर्पण है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

हमें अपना सर्वस्व भगवान के हाथों में, चरणों में समर्पण कर देना चाहिए। उस महान कलाकार को हमें अपनी गढ़त करने का अवसर देना चाहिए। "हे प्रभो! तेरी इच्छा पूर्ण हो" जैसी मूर्ति आप बनाना चाहते हैं, बना डालिये, स्वीकार है।

❖ ❖ ❖ ❖

साधना की पहली सफलता मिलनी चाहिए, वह है कि भीतर में तनाव न हो।

❖ ❖ ❖ ❖

यदि किसी प्रार्थना को हृदय से करने के पश्चात ध्यान करेंगे तो इस कृपा प्रसादी की अधिक प्राप्ति होगी।

❖ ❖ ❖ ❖

सत्संग में बैठते समय मन की भावना मूक होकर प्रकट करना चाहिए। एकान्त में बैठे हैं तो यह समझिए कि गुरुदेव आपके पास बैठे हैं और उनके सामने बैठे हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

हे प्रभु! कभी आपकी विस्मृति न हो जाये। इससे अच्छा है कि मेरी मृत्यु हो जाये। यही उच्च आनंद और महा आनंद का सर्वोच्च भाव उत्पन्न होना है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

संत प्रसादी भाग-2 से उद्धृत

यदि किसी को परमात्मा की प्राप्ति करनी है तो उसे यह करना होगा कि उसकी वाणी में मधुरता हो, व्यवहार शुद्ध हो, प्रेममय हो, मंगलमय हो। अपने लिये नहीं दूसरों के लिये। पहले दूसरों को सुख पहुँचायेंगे, दूसरों को शांति पहुँचायेंगे, दूसरों को आंनद देंगे तब हमें सुख शांति का अनुभव होगा।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रभु को दीनता प्रिय है, जैसे परमात्मा एक जैसा व्यवहार सबके साथ करता है, एक जैसा पालन-पोषण करता है, सब को प्रेम प्रदान करता है, सबको आनंद देता है, उसी तरह जिज्ञासु को भी इन गुणों का प्रतीक बनना होगा।

❖ ❖ ❖ ❖

यदि हमारी कथनी, करनी व रहनी शुद्ध हो जाते हैं तो मन की एकाग्रता या उससे और आगे मन की एकाग्रता, बड़ी आसानी से हो जाती है।

❖ ❖ ❖ ❖

दीनता में आनंद है, प्रसन्नता है। कथनी, करनी और रहनी का मतलब अपने मन को बनाना है।

❖ ❖ ❖ ❖

यदि गुरु या ईश्वर के साथ सच्चा प्रेम है, उनके प्रति भाव और भय है तो आपसे कोई गुनाह हो ही नहीं सकता। आपके सांसारिक सुखों की कमी हो जाये, नुकसान हो जाये, परन्तु कोई बात आप ऐसी नहीं करेंगे जो गुरु के आदेशों के प्रतिकूल हो। वही करेंगे जिसमें उनको प्रसन्नता होती है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

आप अपना स्वनिरीक्षण करने पर देखेंगे तो पायेंगे कि अभी तो हम सागर किनारे पर ही नहीं पहुँचे, अभी तो सागर पार करना है। हमारी कथनी, करनी और रहनी में बहुत कमियाँ हैं। जब हम मनन करेंगे तभी पता चलेगा। मनन भी तभी होता है यदि गुरु या ईश्वर के साथ प्रेम हो।

❖ ❖ ❖ ❖

संसार को जानने के लिये सांसारिक मन की आवश्यकता होती है, परन्तु परमात्मा की अनुभूति तभी होगी जब हम आत्मा का साक्षात्कार कर लेंगे। आत्मा ही परमात्मा में लय हो सकती है, शुद्ध बुद्धि केवल आभास मात्र ले सकती है, वह भी पूरी तरह नहीं।

❖ ❖ ❖ ❖

जो लोग मृत्यु का स्मरण रखते हैं, उनसे बुरे कर्म कम होते हैं। मृत्यु का स्मरण करने से हमारा फल सिद्धि का निशान यानी ईश्वर प्राप्ति का लक्ष्य सुगम होता है।

❖ ❖ ❖ ❖

हमारा शरीर स्वस्थ हो, मन स्वस्थ हो। स्वस्थ से मतलब है कि कुविचारों से ऊपर उठें, संस्कार न बनने पायें। बुद्धि स्वस्थ हो। बुद्धि के स्वस्थ होने का मतलब यह है कि वह प्रेरणा आत्मा या गुरु से ले। मन बुद्धि के आधीन हो, शरीर और इन्द्रियाँ मन के अधीन हों – सब में एक प्रकार का संगीत हो, समन्वयता (Harmony) हो, फिर देखिये आपको शांति मिलती है कि नहीं।

❖ ❖ ❖ ❖

वास्तव में शांति तभी मिलेगी जब बुद्धि स्थितप्रज्ञ अवस्था को प्राप्त करेगी, ज्ञान अवस्था में पहुँचेगी, अनुभव अवस्था में पहुँचेगी। इन सब बातों का आधार चरित्र का निर्माण करना है।

❖ ❖ ❖ ❖

मोक्ष तभी मिलती है कि जहाँ-जहाँ मन फंसा हुआ हो वहाँ से हटाकर आत्मा का साक्षात्कार करा दिया जाये। अपने साथ योग स्थापित कर दिया जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

पहले गुरु की कृपा या ईश्वर कृपा का बीज पड़ता है। फिर धीरे-धीरे उसका विस्तार होता है, तब गुरु कृपा का अनुभव होता है।

❖ ❖ ❖ ❖

यहाँ जितने भाई बहन आये हैं उनकी यथा योग्य सेवा करनी चाहिए। उनकी सेवा करने से ही आपकी सेवा होगी। जब तक गुरु या आचार्य या अन्य शिक्षक वर्ग के लोग उनकी सेवा नहीं करेंगे, उनका स्वयं का उद्धार भी नहीं होगा।

❖ ❖ ❖ ❖

वास्तविक पूजा तो यह है कि जो दिनचर्या है उसको ईश्वरमय बनाना है। प्रत्येक काम, बातचीत, विस्तार पूजा के रूप में, आहुति के रूप में किया जाना चाहिए। आप किसी मित्र के साथ बातचीत कर रहें हैं तो यह ख्याल करिए कि आप अपने इष्टदेव के साथ बातचीत कर रहे हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

जब तक प्रकृति माता आपके रास्ते में अड़चने नहीं डालेगी, आप सफल कैसे होंगे। यह तो आयेंगी ही। जो आदमी इन अड़चनों को ईश्वर की प्रसादी समझकर आगे बढ़ता है, वह ही सफल होता है।

❖ ❖ ❖ ❖

आदर्शमय जीवन व्यतीत करने वाले व्यक्ति के लिये उचित है कि वह प्रत्येक परिस्थिति को ईश्वर की प्रसादी समझे। जो दुःख सुख हमें मिलता है वह पिछले संस्कारों के फलस्वरुप मिलता है। जो भी हम काम करें निष्काम भाव से करें।

❖ ❖ ❖ ❖

दीक्षा लेने का मतलब है कि सब कुछ ईश्वर के चरणों में अर्पण करना और सबसे मुख्य अर्पण करने वाली वस्तु जो है वह अभिमान है, अहंकार है। गुरु से ईश्वर प्रेम की भीख मांगनी चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

परमार्थ के रास्ते पर असंतुष्ट होना चाहिए, कभी संतुष्ट नहीं होना चाहिए। हे प्रभु! और दीजिये, और दीजिये। हे प्रभु! संसार के प्रति उपरामता दीजिये, बस और कुछ नहीं चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

"आप गंवाईए ...ता सौं पाईए" यानी अपना आपा खो दें, अहंकार को खत्म कर दें! दीनता, तालमेल, सहयोग इन गुणों को अपनाये तो ईश्वर की प्राप्ति तुरंत हो सकती है।

❖ ❖ ❖ ❖

करुणा, दया, सहानुभूति, सेवा, ये ऐसे गुण हैं जिनको जब तक हम नहीं अपनायेंगे, तब तक हमें ईश्वर की समीपता प्राप्त नहीं हो सकती। इन गुणों के होते हुये, जिज्ञासुओं में अहंकार रह जाता है और भिन्न भिन्न रूप धारण करके आता है।

❖ ❖ ❖ ❖

अपने भीतर में परमात्मा के प्रति, अपने इष्ट के प्रति व्याकुलता अपनायें।

❖ ❖ ❖ ❖

आप में दीनता हो और राज़ी-ब-रजा हो, जिस हाल में आपका पति यानी परमेश्वर आपको रखे, उसी में खुश रहें, तभी हम सच्चे जिज्ञासु कहलाने योग्य होंगे। तभी हम सच्ची सुहागिन कहलाने योग्य होंगे, नहीं तो हम दुहागिन हैं। हमारा पति हम से कैसे प्रसन्न होगा, और हमें उसका प्यार कैसे मिलेगा?

❖ ❖ ❖ ❖

जैसी भी परिस्थिति प्रतिकूल या अनूकूल आये, हम भीतर में संतुष्ट रहें, आंनदमय रहें।

❖ ❖ ❖ ❖

इस धरती पर सहनशीलता एक महान गुण है। और सत्संगी का यही श्रृंगार है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

जो कुछ होता है हमारे हित के लिये होता है। इसका अभ्यास करना होगा, यही तत्व है हमारे यहाँ का।

❖ ❖ ❖ ❖

हमारे यहाँ का तप है लानत, मलामत, अपमान आदि प्रतिकूल भावों को स्वीकार करना। ये हमारे हित के लिये है, यहाँ का तप है, जो इसको स्वीकार कर लेता है वह आत्मा का साक्षात्कार कर लेता है।

❖ ❖ ❖ ❖

जो व्यक्ति ये साधना करता है कि "हे प्रभु! जो आप करते हैं वह हमारे हित के लिये है" उसके ऊपर विश्वास करते हैं, उसको कभी दुख का भान नहीं होता। वह हमेशा आंनदमय रहेगा, यही राज़ी-ब-रज़ा है (यथा लाभ संतोष) की स्थिति है। अपनी गति को ईश्वर की गति में मिला देना।

❖ ❖ ❖ ❖

अज्ञान का त्याग करना होगा, ज्ञान को अपनाना होगा कि हर प्राणी में एक ही आत्मा काम कर रही है। जब यह सिद्धि प्राप्त हो जायेगी तब भीतर में से मेरा-तेरा पन दूर हो जायेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न प्रकार की साधनायें हैं भिन्न-भिन्न प्रकार के व्यक्तियों के लिये।

❖ ❖ ❖ ❖

हमारा हित इसी में है कि अपमान आदि उत्तेजनाओं को सहन करें और जो हमें उत्तेजना देता है उसके लिये हम प्रार्थना करें। उसके सुख के लिये भी प्रार्थना करें, यह दीनता है। दीनता का दूसरा रूप ये है कि जो ईश्वर करें उसमें तृप्त रहें और यह स्वीकार करें, अभ्यास करें कि जो कुछ हो रहा है हमारे हित के लिये हो रहा है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

सहनशीलता महान तप है। लोगों की बातें सुनना, अपमान सहन करना, दुख-सुख सहन करना - ये हमारे यहाँ का तप है और यही दीनता है।

❖ ❖ ❖ ❖

व्यक्तिगत हानि की कोई चिंता नहीं है, परन्तु अगर समाज की हानि होती है, वहाँ धर्म और अनुशासन पहले हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

दीनता अपनाएँ, सदगुणों को अपनाएँ, अपने गुरुजनों की वाणी पर मनन करें और उसके अनुसार अपना जीवन बनाएँ।

❖ ❖ ❖ ❖

चाहे ईश्वर को आप किसी रूप में मानते हों, देवी देवताओं के रूप में मानते हों, निराकार रूप में मानते हों, प्रभु के साकार स्वरूप को मानतें हों, यह ख्याल करके बैठिये कि हम अपने इष्ट देव के चरणों में बैठे हैं और उनकी कृपा हम पर बरस रही है। ईश्वर की कृपा वृष्टि के नीचे हम अपने आप को समर्पण करके बैठें और ईश्वर की महान कृपा को ग्रहण करें।

❖ ❖ ❖ ❖

स्मृति का मतलब ही है कि उसका स्वरूप और उसके गुण, जैसे ही हम स्मरण करें, उसके नाम का, वह हमारे रोम रोम में अंकित हो उठे। सारा शरीर रोमांचित हो उठे, सब ईश्वर मय प्रतीत होने लगे, सब में ईश्वर के दर्शन हों, उसी की अनुभूति हो। ईश्वर के गुण हैं - सत्, चित्त, आनंद। हमारी भी स्थिति सत्-चित्त-आनंद हो जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

थोड़ी देर अभ्यास में बैठेंगे, शरीर ढीला हो, मन में तक्र आदि न हों, राग-द्वेष का विचार न हो, केवल प्रार्थना का भाव ले कर बैठें कि हे प्रभो! हमें शक्ति दो कि आपकी कृपा प्रसादी को हम ग्रहण कर सकें।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

सब सद्गुणों के समूह का नाम ईश्वर है। सद्गुणों को अपनाने से हम भीतर में शांति, आनंद तथा सुख का अनुभव करते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर के समीप जाने के लिये यह भी आवश्यक है, कि हम शरीर को स्वस्थ रखें। स्वस्थ शरीर ही साधना कर सकता है।

❖ ❖ ❖ ❖

भीतर में राग-द्वेष की भावना न हो। घृणा न हो, ईर्ष्या की भावना न हो। झूठ बोलने की आदत न हो। भीतर में प्रेम की ज्योति प्रकाशित या विकसित होती रहे। सबसे प्रेम करें, क्योंकि प्रेम सर्वव्यापक है। आपकी दृष्टि ऐसी होनी चाहिए कि सबमें ईश्वर के दर्शन करें। जब सबमें ईश्वर के दर्शन करेंगे तो भीतर में बुराइयाँ अप्रयास खत्म होती चली जायेंगी। चित्त, बुद्धि एवं हृदय निर्मल होने चाहिए। मन में कोई बुरी भावना न हो, चित्त में पुराने संस्कार न हों, बुद्धि तक्रमय न हो।

❖ ❖ ❖ ❖

शरीर स्वस्थ है, मन निर्मल है तो भीतर में प्रसन्नता होगी। प्रसन्नता किस वक्त आती है? निर्मल चित्त होने के बाद मन स्थिर हो जाता है, एकाग्र हो जाता है, संकल्प-विकल्प नहीं रहते। संकल्प विकल्प से मुक्त स्थिति में ही प्रसन्नता की अनुभूति होती है। प्रसन्नता के बाद मानसिक शांति की अनुभूति है। तत्पश्चात आत्मा की अनुभूति होती है।

❖ ❖ ❖ ❖

नाम वही है जिसके लेने से ईश्वर का स्वरूप और उसके गुण हमारे सम्मुख आ जाते हैं। हमारे हृदय में अंकित हो जाते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रेम से उसे बुलाइए, प्रेम से उसके चरणों में बैठिये और आपका व्यवहार भी संसार के साथ प्रेममय हो।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

आप अपने व्यवहार से देश में क्रांति लाइये। सत्यता की क्रांति लाइये, प्रेम की क्रांति लाइए, सेवा की क्रांति लाइए। पहले घर पर दया करिये, अहिंसा करिये, अपने-आप को पवित्र बनाइये, फिर परिवार में परिर्वतन लाइये। घर में आनंद का साम्राज्य बनाइये और फिर उसका विकास करते चले जाइये। गृह सुखी हो जाये, विश्व सुखी हो जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

इंसान को इस रास्ते पर चलते हुए कभी भी अभिमानी नहीं बनना है।

❖ ❖ ❖ ❖

अहंकार से प्रभु नहीं मिलते, चाहे कोई भी साधन करें, दीनता को तो अपनाना ही होगा।

❖ ❖ ❖ ❖

यदि हम हृदय से, सत्यता से, प्रभु से क्षमा माँगेंगे और पश्चात्ताप करेंगे और आगे के लिये संकल्प करेंगे और कोशिश करेंगे कि गलतियाँ न हों, तो प्रभु क्षमा कर देते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रार्थना से हमें प्रभु की कृपा प्रसादी मिलती है जो हर वक्त हमारा मार्ग दर्शन करती रहती है।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर से, गुरु से, उसकी कृपा के लिये दीनता पूर्वक प्रार्थना करते रहना चाहिए। इससे रास्ता सरल हो जाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

जिस परिस्थिति में हैं, उससे संतुष्ट रहना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

जो कुछ भगवान ने दिया है उसमें संतुष्ट रहना और जो कुछ भगवान हमारे लिये करते हैं, उसकी गति में अपनी गति मिला देना ही संतोष है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

जब हम ईश्वर से प्रेम करते हैं, गुरु से प्रेम करते हैं, अपने इष्टदेव से प्रेम करते हैं तब इच्छायें कम हो जाती हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

जो प्रभु से प्रेम करते हैं, उनकी सहज ही, अप्रयास ही त्याग की वृत्ति हो जाती है। उनका शरीर के साथ लगाव नहीं रहता।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर प्रेम में ऐसा आनंद है कि सहज में ही जब उस आनंद की प्राप्ति हो जाती है तब इच्छा कुछ रहती ही नहीं। फिर वह व्यक्ति पाप कर ही नहीं सकता।

❖ ❖ ❖ ❖

चाहे जैसी भी परिस्थिति हो, संतोष का जीवन बनायें यानी ईश्वर की गति में अपनी गति मिला दें।

❖ ❖ ❖ ❖

'सत्' हमारा लक्ष्य है, ध्येय है। उसकी प्राप्ति के लिये संतोष को अपनाना पड़ेगा। भीतर में निर्मल हो, व्यवहार भी निर्मल हो, शरीर निर्मल हो, वाणी निर्मल हो। तब संतोष आता है। जिस अवस्था में प्रभु ने रखा है, उसमें खुश रहें।

❖ ❖ ❖ ❖

राम नाम का मतलब यह है कि राम के गुणों को अपनाना है। ईश्वर के गुणों का स्मरण करते हुए उन गुणों को भीतर में धारण करना है और अपने जीवन में व्यक्त करना है। यह सब 'नाम' ही कहलाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

घर में प्रेम का वातावरण होना चाहिए। भले ही टूटी फूटी छोटी सी झोपड़ी ही क्यों न हो, यदि उसमें ईश्वर का गुणगान होता है, ईश्वर के गुणों का विस्तार होता है तो उत्तम है। अगरबत्ती सुगंधि फैलाने के लिये जलाते हैं, परन्तु सुगंधि काहे की होनी चाहिए, हमारे सद्व्यवहार की, हमारे सद्गुणों की, हमारे शुद्ध विचारों की।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

जिस परिस्थिति में परमात्मा रखें उसी में आनंदित रहें। भीतर में तृप्ति होनी चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

परमात्मा के पास जाने से पहले काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार का जो बोझ हमने अपने सिर के ऊपर लाद रखा है, उसका त्याग करना है।

❖ ❖ ❖ ❖

कर्मों द्वारा हम परलोक तक तो पहुँच सकते है, परन्तु मोक्ष, जब तक प्रभु की कृपा नहीं होती, गुरु की कृपा वृष्टि नहीं होती, तब तक नहीं मिलती।

❖ ❖ ❖ ❖

जिन अभ्यासियों की सुरत गुरु या परमात्मा में या भगवान राम के चरणों में लीन हो जाती है, वहीं लोप हो जाती है तो उनका संबंध परमात्मा के अस्तित्व के साथ हो जाता है। जिनकी सुरत शरीर पर है उनका संबंध तत्वों के साथ रहता है। जिनकी सुरत मन पर है वे चंचलता में रहते हैं, मन के स्थान पर रहते हैं। वायुमंडल में भी जहाँ मन का स्थान है यानी कभी उतार कभी चढ़ाव है, कभी तो आप परलोक के विचार उठाते हैं; कभी गिर जाते हैं। कभी बड़े अच्छे विचार आते हैं तो उस वक्त संतों का ध्यान आता है, परमात्मा का ध्यान आता है और उसके निकट होते चले जाते हैं। जब नीचे गिर जाते हैं तो राक्षसों जैसी प्रवृत्तियाँ हो जाती हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

साधना यही है कि सीता बन कर अपनी सुरत को जो नीचे के स्थानों में फँसी है उसे वहाँ से निकाल कर ऊपर के स्थानों में ले जाना है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

जब तक सरलता नहीं आयेगी, हम कितने ही विद्वान बन जायें हमारी आत्मा परमात्मा में लीन नहीं हो सकेगी जिसको कि हम 'योग' कहते हैं। 'योग' का मतलब ही है जुड़ना या विवाहिता होना या लय होना, या उसी में समा जाना।

❖ ❖ ❖ ❖

साधना यही है कि इन राग द्वेष दोनों से अलग हो कर सीता जी जैसे निर्मल पवित्र हो कर हम भगवान राम की पूजा करें।

❖ ❖ ❖ ❖

यदि गुरु की कृपा, यानी ईश्वर की कृपा हो जाये तो यह रहस्य समझ में आ जाता है कि वास्तव में आप और परमात्मा एक हैं, कौन लड़ता है? कौन मरता है? अब प्रभु ने यह दायित्व दिया है तो यह सेवा है।

❖ ❖ ❖ ❖

यही साधना करनी है कि ईश्वर के रहस्य को समझें और उसके अनुसार अपना जीवन व्यतीत करें।

❖ ❖ ❖ ❖

साधना यही है कि इस मलीनता को धोकर शुद्ध हो कर गंगा के प्रवाह में पुनः सम्मिलित हों।

❖ ❖ ❖ ❖

मन और बुद्धि को मिलाने का नाम 'परमार्थ' है।

❖ ❖ ❖ ❖

शिवलिंग की उपासना, पूजा करतें हैं, यह आज्ञाचक्र पर जो प्रकाश है, ललाट पर जो तीन तिलक लगाते हैं यह प्रतीक है उसका। यह चंदन जो लगाते हैं, वह शांति का प्रतीक है। प्रकाश के या भगवान शिव के तीन रुप बताये गये हैं। पहला रूप प्रकाश का है। दूसरा रूप सत् है और तीसरा रूप निर्मलता।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

संत भी सूर्य समान हैं, ईश्वर समान हैं। जैसे सूर्य की किरणें दूर दूर तक जाती हैं वैसे ही संतों की किरणें भी दूर दूर तक जाती हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर की ओर से संत की ड्यूटी लगी होती है कि वे जहाँ रहते हैं वहाँ की देखभाल करते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

संत प्रसादी भाग-3 से उद्धृत

आप सोचते हैं कि भगवान के दर्शन घरबार छोड़ कर जंगलों में होंगे, यह एक भूल है। एकान्त कभी कभी सहायक होता है, परन्तु हमेशा के लिये नहीं। भीतर में तो हमारे अवगुण हैं, संस्कार हैं, यदि हम घर में रहते तब या जंगलों में चले जाते तब, मन तो वहीं रहेगा, वहाँ जा कर भी वही विचार उठायेगा जो घर में रह कर उठाता है। तनिक सा फक्र पड़ सकता है इसमें शक नहीं, परन्तु जंगल में जा कर मन पूर्णतः निर्मल हो जाये संभव नहीं है, उसके लिये काफी समय चाहिए, काफी साधना चाहिए। गुरुदेव कहते हैं कि मन का साधन करो, घर में रह कर करो।

❖ ❖ ❖ ❖

जो काम करो ईश्वर की हुजूरी की स्मृति में ईश्वर के प्रति निष्काम भाव से, दूसरों की सेवा के रूप में करो तथा कर्म के फल के प्रति आसक्ति न हो।

❖ ❖ ❖ ❖

भगवान कितने दयालु हैं कि जैसी जिसकी भावना है, जैसी जिसकी वृत्ति है, उसी प्रकार आप उसको साधन बताते हैं। इसलिये मन में कभी निराश नहीं होना चाहिए कि समय का अभाव है।

❖ ❖ ❖ ❖

जब मनुष्य की बुद्धि निर्मल हो जाती है तब वह शत्रु और मित्र दोनों को एक भाव से देखता हुआ निष्काम भाव से दोनों की एक भाव से सेवा करेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रभु जो कुछ करते हैं वह हमारे हित में है और जिस परिस्थिति में, जिस काम पर उन्होंने हमें रखा है हम उन परिस्थितियों में रह कर भगवान की उपासना भक्ति द्वारा, ज्ञान द्वारा, सन्यास द्वारा, योग द्वारा निष्काम भाव द्वारा समर्पण भाव से करें।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

"Work is Worship" कर्म ही उपासना है। कर्म कब उपासना बनता है ? जब हम भगवान के आदेशानुसार निष्काम भाव से कर्म करते हैं और फल की कोई आशा नहीं रखते।

❖ ❖ ❖ ❖

'मोक्ष' का क्या मतलब है, कि जहाँ फंसा हुआ है वहाँ से मुक्त हो जाये और हमारे अंतःकरण में जो पिछले संस्कार हैं जिनके कारण हमारी वृत्तियाँ बनती हैं, स्वभाव बना है, जिसके कारण हम अपना व्यवहार करतें हैं उसमें क्रांति आये, परिवर्तन आये। बार बार ईश्वर की याद आयेगी तो ईश्वर का रूप बनते जायेंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

जिनको समय मिलता है साधना भी करें और सारे दिन प्रभु की स्मृति में रहें। जिनको समय नहीं मिलता है वे कर्म को ही उपासना का रूप दें, कुछ और करने की ज़रूरत नहीं है।

❖ ❖ ❖ ❖

कोई भी पूजा करें सब अच्छी हैं। सबका लाभ होता है। परन्तु असली पूजा वही है जो परमात्मा की प्रसन्नता दिलाये। यदि आप को काम करते हुये प्रसन्नता मिलती है, आप को ही नहीं, जिनके साथ आपका व्यवहार है उनको भी ऐसे शुभ गुण मिलते हैं यानी तृप्ति मिलती है, आनंद मिलता है, शांति मिलती है, सुख मिलता है, इससे अच्छा और क्या हो सकता है, यह महान तप है। व्यवहार में सहनशीलता होनी चाहिए। इस व्यवहार में अनेक कठिनाईयाँ आयेंगी। उन कठिनाईयों की चिंता न करते हुए अपने इस सहनशीलता के भाव को बनाये रखें, इस भाव को भी कि जो कुछ हम करते हैं ईश्वर के प्रति करते हैं, उस भाव को हम न छोड़ें। कुछ समय बाद यह भाव हमें ईश्वर के चरणों में मिला देगा।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

"हर समय ईश्वर के होने का आभास" यह एक प्रकार का अभ्यास है जो प्रत्येक व्यक्ति को करना चाहिए (चाहे वह किसी प्रकार की साधना करता हो) प्रत्येक क्षण प्रभु की याद में रहें, उसकी हुजूरी का भान करें। हमारे यहाँ फ़ैज़ (ईश्वर कृपा) को लेने का तरीका यही है। इस हुजूरी को परिपक्व करने के लिये है। आगे चल कर बाहर भी है और भीतर भी है। इस अभ्यास को करें और जिस प्रकार की साधना आप करते हैं उस भाव को बढ़ाते रहें। कोई भी साधना करें, निर्मल और प्रेम भाव से करें।

❖ ❖ ❖ ❖

समर्पण में बुराई भलाई कुछ नहीं है। सब उसी के अर्पण है। बुराई भलाई है क्या ? अगर हमने अपने आपको उनके समर्पण कर दिया तो बुराई क्या रही ? भले हैं तो भी तुम्हारे हैं, बुरे हैं तब भी प्रभु तुम्हारे हैं। यह कहने मात्र के लिये न हो वह वास्तविकता बन जाये। प्रभु तो आपके पास ही हैं, कहीं दूर नहीं हैं। समीप से समीप हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

चाहे हम और कुछ न करें, केवल भगवान की लीलाओं की याद करके उनका स्मरण करें यही साधना हमें अपने जीवन में सफलता के मार्ग पर लगा देगी।

❖ ❖ ❖ ❖

सच्चा गुरु जो होता है वह परमात्मा ही होता है। गुरु में और परमात्मा में कोई अंतर नहीं।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु और ईश्वर एक हैं। ईश्वर उस व्यक्ति में पूर्णतया समाया हुआ है। वो ही गुरु है, वह ही ईश्वर है।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु के आदेशों को बिना शंका के शत-प्रतिशत, बिना चूँ-चाँ किये पालन करना ही सर्वोत्तम सेवा है। ऐसी सेवा से मनुष्य का उद्धार हो जाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

जब तक भीतर से बुराईयाँ छूटेंगी नहीं, विकार दूर नहीं होंगे, मन स्थिर नहीं होगा, शांत नहीं होगा, आप चाहे जितनी भी उपासना करते रहें, आपको साक्षात्कार अपने स्वरूप का, चाहे परमात्मा का, चाहे गुरु के वास्तविक रूप का नहीं हो सकता। विकार छूटने चाहिए। जैसे दर्पण के सामने अपनी शक्ल दिखाई देती है, उसी प्रकार उस महान व्यक्ति के पास बैठने से मन शांति, आनंद और सुख की अनुभूति करता है।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रत्येक व्यक्ति के लिये समय बिल्कुल ही थोड़ा है। यह याद रखना चाहिए कि मृत्यु को किसी का लिहाज़ नहीं है। तब इंसान परमार्थ के रास्ते पर चलना शुरु कर देता है। साथ-साथ ईश्वर की कृपा के लिये भी प्रार्थना करते रहना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

इस मनुष्य चोले का उद्देश्य है कि पिछले जन्म के जो संस्कार हमारे भीतर में जमा हैं उन्हें भोगकर हम जन्म-मरण से मुक्ति प्राप्त करें।

❖ ❖ ❖ ❖

इस राग और द्वेष के धागे से हम अपने को बांधते चले जाते हैं। इसी को बंधन कहते है।

❖ ❖ ❖ ❖

दो रास्ते हैं, एक भक्ति का और दूसरा ज्ञान का। भक्त भगवान को बाहर से ढूँढ़ता है, ज्ञानी भगवान को अन्दर खोजता है। बात एक ही है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

आत्मा का साक्षात्कार जब होता है, परमात्मा के जब दर्शन होते हैं, तब मन की मलीनता प्रभु के प्रेम से धुल जाती है। आत्मा निर्मल हो जाती है। शिव भगवान के सिर से गंगा निकली है वह ज्ञान-गंगा है। उस गंगा में स्नान करना है। वह गंगा सब जगह बह रही है, उस ईश्वरीय शांति की वृष्टि सब जगह हो रही है। करना यही है कि शरीर, मन और इन्द्रियों को माया से हटा कर अपनी सुरत को प्रभु के चरणों में, भगवान शिव की गंगा में लगायें। चाहे भक्ति द्वारा करें, चाहे ज्ञान द्वारा करें, यह आपकी इच्छा है।

❖ ❖ ❖ ❖

जब हम माता के मंदिर में जाते हैं तो नारियल भेंट करते हैं, वह नारियल प्रतीक है हमारे सिर का। वह प्रतीक है हमारे अहंकार का, अपना अहंकार अर्पण करना है। नारियल बड़ा कठोर होता है, बड़ी मुश्किल से टूटता है, जो सिर देता है, यानी अहंकार का संपूर्ण त्याग करता है उसी को प्रभु दर्शन देते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

जिसको आत्मा की अनुभूति हो जाये, उसको कितनी भी अधिक कठिनाई आ जाये, वह तो राजाओं का राजा है।

❖ ❖ ❖ ❖

सच्चा सुख परमात्मा के मिलने में ही है और वही हमारे जीवन का लक्ष्य है। यही मनुष्य चोले का ध्येय है कि इसी जीवन में हम आत्मा का साक्षात्कार कर लें, भगवान के दर्शन कर लें।

❖ ❖ ❖ ❖

'उपासना' का मतलब है उप + आसन, यानी परमात्मा के समीप अपना आसन लगाना। परन्तु जो गुण ईश्वर में हैं वे ही जिज्ञासु में उतर जाने चाहिए। यह असली ईश्वर के दर्शन हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

मन में बसाने का मतलब यह है कि हमारे रोम रोम में ईश्वर के गुण बस जाने चाहिए और वे अप्रयास ही हमारी वाणी द्वारा, विचार द्वारा, और व्यवहार द्वारा व्यक्त होते रहते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

कोई आशा न हो, कोई इच्छा न हो, स्वभाव ही ऐसा हो जाये, सहज बन जाये। इसी को सहज अवस्था कहते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

पहले तो ईश्वर के चरणों में बैठ कर कोशिश करनी चाहिए। रोने से बहुत कुछ सफाई हो जाती है, किन्तु सच्चे हृदय से रोइये।

❖ ❖ ❖ ❖

साधना भी करिये और उसके साथ अपने आप को देखते चले जाइये कि साधना का प्रभाव मेरे व्यवहारिक जीवन पर कितना पड़ा है। दोनों करने चाहिए, यह मेरी तुच्छ राय है।

❖ ❖ ❖ ❖

सत्संग में जाने से पहले अपने मन से बुराईयों को धो डालिये, और फिर अपने इष्टदेव के चरणों में बैठिये।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु महाराज ने कुछ प्रेमियों को बताया हुआ है कि सुबह नाभि से साँस ले कर सात दफा या दस दफा 'ऊँ तत्सत्' (यानी कुछ नहीं सिवाय परमात्मा के) का अभ्यास करें।

नोटः (इस अभ्यास को कोई भी व्यक्ति अपने गुरु से पूछे बिना न करे) गुरु रूप में लय हो कर यह साधना की जाती है।

गुरु कौन है? सत्, चित्त, आंनद स्वरूप परमात्मा। इसके बाद साधना शुरु कीजिये, उसके बाद गुरु वंदना पढ़िए। जिसके पास जा रहे, पहले उनके गुणों को सराहना चाहिए। जो भजन या शबद या वाणी आपको अच्छी लगे, प्रभु की तारीफ में उसको तल्लीनता से गाइये, तब साधना शुरु कीजिए। इसी प्रकार जब साधना खत्म

Scanned by CamScanner

करें, प्रसाद बँटें तो प्रसाद लेना चाहिए आशीर्वाद के रूप में। पुनः प्रभु के गुणों को सराहना चाहिए, कीर्ति करनी चाहिए। संत इसको कीर्तन बोलते हैं। प्रभु के गुणों को जितना सराहेंगे उतना ही अधिक लाभ मिलेगा। गुणों को सराहते सराहते आप विस्माद में चले जाइये और विस्माद में आपका मन शीतल हो जायेगा। केवल परमात्मा रह जायेगा, 'ॐ तत्सत्'।

❖ ❖ ❖ ❖

भगवान कितने महान होते हुए भी उनमें कितनी दीनता है। यदि हम भगवान की पूजा करते हैं तो हमें भी दीनता अपनानी पड़ेगी।

❖ ❖ ❖ ❖

भगवान तो एकता के स्वरूप हैं, यदि हम उनकी पूजा करते हैं तो हमारे भीतर में भी एकता का भाव होना चाहिए। हमारी आँखों में, हमारे हृदय में सबके प्रति सम्मान हो, कोई छोटा नहीं, कोई बड़ा नहीं, क्योंकि सबमें परमात्मा हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

महाभारत का युद्ध तो हर वक्त हर व्यक्ति के भीतर में होता ही रहता है। इस संग्राम में विजय प्राप्त करनी है, कुरुक्षेत्र का मैदान, धर्म क्षेत्र का मैदान, कर्मक्षेत्र का मैदान जो भी कुछ कह लीजिए, इसमें जिज्ञासु को विजय प्राप्त करनी है। अर्थात् अपने मन पर वृत्तियों पर, अपने शरीर पर, इन्द्रियों पर, विजय प्राप्त करनी है। विजय प्राप्त करके क्या करना है? समता में रहना है।

❖ ❖ ❖ ❖

यदि हम सुख का जीवन व्यतीत करना चाहते हैं, हम संस्कार ले कर आये हैं, यह मनुष्य चोला मिला है, इन संस्कारों से निवृत्त हो जायें। क्योंकि जब तक संस्कारों से निवृत्त नहीं होंगे हमें मोक्ष प्राप्त नहीं होगी।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

प्रत्येक व्यक्ति को, जिज्ञासु को गुरु का दामन पकड़ कर या ईश्वर का आश्रय लेकर इस संसार रूपी कुरुक्षेत्र में आगे चलना है। पिछले संस्कार तो भुगतने हैं ही, परन्तु आगे के संस्कार नहीं बनने देने हैं। तभी हमें आगे जाकर सुख मिलेगा यानी मोक्ष प्राप्त होगी, अन्यथा फिर वही जन्म-मरण के चक्कर में पड़ जायेंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

जो भी काम करें उसके फल के साथ चिपकें नहीं। उसके साथ हमारी आसक्ति न हो।

❖ ❖ ❖ ❖

वास्तव में हमें जो करना चाहिए, वह है, भगवान के जो गुण हैं, विशेषकर गीता में उपदेश हैं, उनका खूब चिंतन करें और उन गुणों को अपनाने की कोशिश करें। और वैसे ही गुण हमारे हो जायें।

❖ ❖ ❖ ❖

अगर वास्तव में आप भगवान के दर्शन करना चाहते हैं और सत्संग को फैलाना चाहते हैं तो भगवान के गुणों को अपनाइए और दीन बन कर रहिये।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर में श्रद्धा, विश्वास होगा तब ही प्रेम जागेगा। हमारा सर्वस्व उधर लगे तब सच्चा सुमिरन कहा जायेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

हमारे यहाँ का तप है कि लोग भला बुरा कहें, हम बर्दाश्त करें। लोग हमारी बुराई करते हैं, यह अच्छा है। आप देखें कि आत्मा के कितने नज़दीक हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

कठोरता के साथ बोला गया सत्य भी अहंकार है।

❖ ❖ ❖ ❖

अहंकार के रहते बनावटी दीनता ही आ सकती है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

हमारा यही तप है कि हम बुराईयों को देखें और छोड़ें। संसार हमारी बुराई करता है तो उसके साथ बदले में केवल भला करें। ईश्वर सत् स्वरूप है, निर्मल है, हमें वैसा ही बनना है।

❖ ❖ ❖ ❖

संत मत में समता से अधिक ज़ोर प्रेम और दीनता पर दिया जाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

भक्ति साधना में और ज्ञान साधना में कोई विशेष अंतर नहीं है। भक्त भगवान की सराहना करता है और करते रहने से उसके भीतर में भगवान के गुण बस जाते हैं। ज्ञानी अष्टांग योग करता है और जब चित्त एकाग्र हो जाता है तो संसार से उदासीन हो जाता है। वह धारणा करता है भगवान की। धारणा करने का मतलब ही यह है कि उसमें वही भाव है जो भक्त द्वारा भगवान के गुणों में सराहने में है। ज्ञानी तकलीफ से साधना करता है। भक्त प्रेम से, आराधना से, गुणगान से अर्चना करते हुए उसके रूप का ध्यान करता है। ज्ञानी की धारणा ध्यान रूप बन जाती है, वही ध्यान समाधि में बदल जाता है और उसको सराहता हुआ 'तू तू करता तू भया' वही रूप बन जाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

हाथ-पाँव की सेवा मामूली सेवा है, पैसे की सेवा तुच्छ सेवा है। सर्वोत्तम सेवा है गुरु के आदेशों और उपदेशों का पालन करना।

❖ ❖ ❖ ❖

धर्म का पालन करना है, किसी से द्वेष नहीं करना है। यदि हो सके तो सबकी सेवा करें। पहले अपनी सेवा करो। इस सेवा में परिवार की सेवा भी आ जाती है। परिवार की सेवा के पश्चात्त यदि आप के पास कुछ बच जाता है तो अपने संबंधियों की सेवा करें, उसके बाद अपने रिश्तेदारों की सेवा करें फिर अपने देश, विदेश की।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

अपने आप को खुश रखें। अपनी आन्तरिक प्रसन्नता के बाद ही गुरु की प्रसन्नता या परमात्मा की प्रसन्नता प्राप्त होती है। प्रसन्नता के बाद ही मन स्थिर होता है।

❖ ❖ ❖ ❖

वास्तविक ध्यान यह है कि गुरु का जीवन, उनके गुण, उनका आत्म प्रकाश हमारे भीतर में बस जाये। हमारे जीवन का रूप बन जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

सब महापुरूषों ने कहा है बिना सदगुणों के अपनाये हुए ईश्वर भक्ति या ईश्वर ज्ञान उत्पन्न नहीं होता है। और बिना सच्ची भक्ति या सच्चे ज्ञान के ईश्वर के दर्शन नहीं होते। सच्चा सुख और सच्चा आंनद इसी में है कि प्रभु के गुणों को अपनायें। उनकी सेवा यही है।

❖ ❖ ❖ ❖

दर्शन का मतलब है कि परमात्मा के जिस रूप की हम पूजा करते हैं, उस महान हस्ती के गुण हमारे रोम रोम में बस जायें, सहज अवस्था हो जाये, वे ही गुण हममें भी आ जायें। ये ही दर्शन है।

❖ ❖ ❖ ❖

वास्तविक साधना तो हमारा व्यवहार है।

❖ ❖ ❖ ❖

हम अपने व्यवहार को शुद्ध और पवित्र करें। अपने व्यवहार को ही पूजा का रूप बनायें, संसार को मंगलमय बनायें और इस प्रसन्नता द्वारा प्रभु के चरणों में पहुँचने का प्रयास करें।

❖ ❖ ❖ ❖

हम तमाम संसार की बातें दिन भर अंदर जमा करते रहते हैं। ध्यान में ये सिनेमा की रील की तरह चलती है। इस तरह के विचार, इच्छायें जितने कम होंगे, उतना ही साधन ठीक बनता जायेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

यदि आपको शब्द सुनना है तो परमात्मा या गुरुदेव (दोनों एक ही बात है) के चरणों में विनम्रता से बैठें। प्रेम से एक ही भजन पढ़े, फिर उसकी लीला में अपने आप को लीन करने का यत्न करें। अपने आप को एकदम खाली कर दें, फिर ध्यान में तल्लीन हो जायें। कुछ दिनों के अंदर ही आपको शब्द सुनाई देगा।

❖ ❖ ❖ ❖

मंज़िल तो अपने इष्ट के इश्क में अपने आप को मिटा देना है। उसका प्यारा बनना है। करूणा से पुकार करनी है।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर सर्व व्यापक है और उसकी कृपा की धार प्रतिक्षण सब प्राणियों पर एक जैसी बरस रही है। इस बारिश को सूफियों में 'फैज़' कहा है, संतों ने अमृत कहा है, ईसाइयों ने (Grace) कहा है, अरविंद जी ने 'भगवत प्रसादी' कहा है। इसी को प्रभु के चरण कहा गया है।

❖ ❖ ❖ ❖

'फैज़' क्या है? जैसे सूर्य है और उसका प्रकाश है, उस प्रकाश को पकड़ते हुए हम सूर्य तक पहुँच सकते हैं। उस प्रकाश में वही गुण हैं जो सूर्य में हैं, प्रभु के जो गुण हैं वह इस 'धार' में, इस अमृत में हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

मन को पहले निर्मल कर लें, वातावरण को भी कुछ योग्य यानी शुद्ध बना लें, साधना में जिस वक्त बैठें, प्रभु का गुण-गान करें, स्तुति करें और हृदय की झोली फैला कर बैठ जायें, यानी शरीर को ढीला छोड़ दें। बिलकुल ढीला, पूर्णतयः Relaxed, ईश्वर से प्रार्थना करें कि "हे प्रभु! हमें प्रेम प्रदान करें, हमें अपनी शरण में ले लें, हमें अपनी कृपा प्रसादी प्रदान करें" और मन ही मन में उसका नाम, जो भी आपको अच्छा लगता है, लेते रहें। दो या तीन मिनट बाद आप अनुभव करेंगे, बरसों की प्रतीक्षा की आवश्यकता नहीं है उसी वक्त तुरंत आपको अनुभूति हो सकती है। आप देखेंगे कि दो या तीन मिनट बाद आपके शरीर को कुछ छू रहा है। अंदर और बाहर अगर आप इसी प्रकार

Scanned by CamScanner

बैठे रहेंगे तो भीग जायेंगे, इसी प्रसादी से, अमृत से, इसी फैज़ से। जितना शरीर को ढीला छोड़ेंगे, समर्पण भाव में बैठेंगे और मन भी शांत होगा तो, इन चरणों की अनुभूति तुरंत ही हो सकती है। और यदि व्यक्ति यही अभ्यास करता रहे, गुरु महाराज महात्मा श्रीकृष्ण लाल जी महाराज ने कहा था, यदि छह महीने यही अभ्यास लगातार चौबीसों घंटों करता रहे तो उसको पूर्णतया लय अवस्था प्राप्त हो सकती है एवं उसका भीतर और बाहर दोनों ही ईश्वरमय हो जायेंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

मन को शांत करने के लिये पहला चरण है 'सदाचार का, सदविचार का, सदव्यवहार का। जब तक सदगति नहीं आती है तब तक मन स्थिर नहीं होगा, एकाग्र नहीं होगा और जब तक शरीर में तनाव रहेगा तब तक अमृत प्रसादी, भगवती प्रसादी का पूर्ण अनुभव नहीं हो सकता है। अपने आप को पूर्णतया समर्पण कर देना है।

❖ ❖ ❖ ❖

कोई मूर्ति पूजा करता है, मंदिर जाता है, उसको भी ऐसा सोचना चाहिए कि भगवान सामने बैठे हैं। वैसे तो ईश्वर की ओर से कृपा आती है, पर मंदिर में जो मूर्ति स्थापित है, उसके द्वारा भी ली जा सकती है। और ऐसे ही गुरु के द्वारा भी ली जा सकती है। मंदिर में जाते हैं तो मंदिर में भी पहले आराधना करते हैं, प्रार्थना करते हैं, अपने इष्टदेव के सम्मुख बैठ जाते हैं। उस समय यह ख्याल करें कि यह प्रसादी उनके हृदय से या मस्तिष्क से निकल कर हमारे शरीर में फैल रही है। यह प्रसादी मूर्ति से भी ग्रहण कर सकते हैं, गुरु से भी कर सकते हैं। किसी पुस्तक में श्रद्धा है तो उसके माध्यम से भी ग्रहण कर सकते हैं क्योंकि ईश्वर सर्वज्ञ है, सर्व व्यापक है।

❖ ❖ ❖ ❖

अपने आप को शुद्ध निर्मल करते जाइये तो आत्मा की धीरे-धीरे अनुभूति हो जायेगी। अर्थात् अपनी सेवा करते जाइये, अपने आप को धोते जाइये, ज्ञान से, भक्ति से, जैसी आपकी वृत्ति हो, अपनी सेवा करें।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

संत के भीतर में प्रेम होता है, सत्यता होती है, आंनद होता है, शांति होती है। उसके भीतर में से इन गुणों की रश्मियाँ अप्रयास निकलती रहती हैं। उनका शरीर इन तरंगों से Viberations से, इन रश्मियों से पूरित होता है। उनका पूर्ण शरीर इन गुणों के कारण पवित्र होता है।

❖ ❖ ❖ ❖

संतों के चरणों द्वारा आत्मिक शक्ति निकलती है। आत्मा की तरंग निकलती है। यदि संत हमें आज्ञा दें और हम उनके चरण छुएँ और उनकी सेवा करें तो उनके चरणों और उनके भीतर जो कुछ है, प्राप्त
कर सकते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रभु की कृपा और महापुरूषों का उपदेश और तीसरा उनकी आत्म प्रसादी। यह आत्मिक प्रसादी उनके पास बैठ कर प्राप्त होती है। इसी को सत्संग कहते हैं, यानी ऐसे व्यक्ति का संग करना जो पूर्णतः सत्यता का रूप बन गया है। उसी को संत कहते हैं और उसी का संग सत्संग कहलाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

अहंकार से मुक्त हो कर अपनी आत्मा को उनकी आत्मा में मिला देना, यह सत्संग है।

❖ ❖ ❖ ❖

जो दुख सुख से अछूता है वह हमारी आत्मा है, दुख सुख को कौन अनुभव करता है, वह है हमारा अहंकार, मन, बुद्धि मिलकर। जब तक हम निज रूप में आत्मा रूप नहीं होते हैं तब तक सुख का, दुख का अनुभव होना स्वाभाविक है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

जो व्यक्ति आत्मस्थित रहता है उसको दुख सुख नहीं होता है। इसका साधन क्या है? आत्मा का साक्षात्कार करना या अपने स्वयं रूप में स्थित होना या प्रभु के चरणों में रहना। इसके कई साधन हैं। भक्ति का साधन, प्रेम का साधन, योग का साधन, अष्टांग योग का, वेदांत का साधन, ज्ञान का साधन।

❖ ❖ ❖ ❖

व्यक्ति केवल नाम के उच्चारण से इस स्थिति में पहुँच सकता है यानी आत्मा का साक्षात्कार कर सकता है, परमात्मा के दर्शन कर सकता है।

❖ ❖ ❖ ❖

निरंतर ईश्वर या गुरु की याद बनी रहे, वह भी प्रेम से, श्रद्धा से, विश्वास के साथ जैसे सरल बच्चा यानी नवजात शिशु माँ की गोद में संतुष्ट रहता है। इसी प्रकार प्रभु के चरणों मे रहना है। जो व्यक्ति इस तरह प्रभु के नाम का स्मरण करता है, उसे प्रभु के दर्शन हो सकते है। अपनी आत्मा का साक्षात्कार हो सकता है तथा संसार में या भीतर में जितने दुख सुख हैं उनसे मुक्त हो सकता है। ज्ञान कहता है कि मूर्ख तू तो शरीर नहीं, तू तो आत्मा है। सुख दुख आत्मा को नहीं होता। अनुभूति होनी चाहिए ज्ञान की। 'मै आत्मा हूँ' इसकी अनुभूति होनी चाहिए। तब वह कह सकता है ''अहं ब्रह्मस्मि''।

❖ ❖ ❖ ❖

हम साधना करते हैं, मौन में बैठते हैं, यही साधना है। अपने आप को पूर्णरूपेण प्रभु के चरणों में, गुरु के चरणों में समर्पण कर देते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

सब दुःखों से निवृत्ति का साधन है कि हमें अपने स्वरूप का ज्ञान हो जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

अपने जीवन को, अर्थात् शरीर को, मन को, बुद्धि को गुरु के आदेशों के अनुसार स्वस्थ रखना है।

❖ ❖ ❖ ❖

हमें अंतर में गुरु के दर्शन करने हैं, आत्मा का साक्षात्कार करना है, या ईश्वर के दर्शन करने हैं, ये तीनों बातें एक ही हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु की सेवा, भाईयों की सेवा करो, यह भी गुरु सेवा है। माता पिता की सेवा करो, यह भी गुरु की सेवा है। इसके बाद गुरु के जो गुण हैं, ईश्वर के जो गुण हैं उनको सराहते हैं। जितना उसके स्वरूप को, गुणों को सराहेंगे, उतना ही निखार आता चला जायेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु या ईश्वर के गुणों को सराहो। इसी को कीर्तन कहते हैं। प्रभु की कीर्ति करो, उपचार करो, यह नौ प्रकार की भक्ति (नवधा भक्ति) भी इसी में आ जाती है।

❖ ❖ ❖ ❖

जो गुरु के गुण हैं, उनको सराहते हुए, उनकी स्मृति करते हुए उनको अपने जीवन में उतारें। आगे चल कर पूर्ण समर्पण होता है। इससे पहले नहीं।

❖ ❖ ❖ ❖

साधना में पहली बात यह है कि साधना में रुचि उत्पन्न हो, बिना रुचि उत्पन्न हुए आंनद नहीं आयेगा और जब तक आंनद नहीं आता चित्त निर्मल नहीं होगा। और जब तक चित्त निर्मल नहीं होगा आप किसी तरफ नहीं बढ़ सकते।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर से प्रेम उत्पन्न करिये, इसके पहले सत्गुरु को अपनाईये। याकुलता, विरह, यह उत्पन्न होने चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

प्रभु के गुणों का स्मरण करना, बार बार स्मरण करना। तस्वीर या गुरु के शरीर का अपने भीतर में ध्यान करेंगे तो जड़ता आ जायेगी। गुणों को स्मरण करने से ही आपके भीतर में गुण अंकित हो जायेंगे, यही ध्यान है।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रभु के पवित्र विचार प्रभु के पवित्र गुणों का ध्यान, उसके प्रति हमें होश है, जागृति है, उसके प्रति, जब तक उन गुणों के प्रति जागृति नहीं होगी। आपके भीतर में वह गुण बसेंगे कैसे?

❖ ❖ ❖ ❖

बिना ईश्वर के या गुरु के, जो कि ईश्वर स्वरूप है, उसकी कृपा के बिना मनुष्य का उद्धार नहीं हो सकता है। भ्रम दूर होना इसका मतलब है उद्धार। इस माया के जंजाल से निकलना, बिना गुरु की कृपा के नहीं हो सकता, ईश्वर कृपा के बिना नहीं हो सकता। इस पात्रता के लिये साधना करनी है।

❖ ❖ ❖ ❖

इस रास्ते पर दीन भक्त पात्र बन सकता है। और दीनता से प्रभु का कृपा पात्र बन कर मोक्ष को या अपने अन्तर धाम को पहुँच सकता है। ईश्वर की कृपा के लिये हर वक्त प्रार्थना करते रहना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

व्यवहार में दीनता हो, हमारी बोल चाल में दीनता हो। व्यवहार में दीनता को मत छोड़िये। विचारों में दीनता लायें, व्यवहार में दीनता लायें, साधना में दीनता लाइये। अधिकाधिक दीनता हो, झूठी दीनता न हो, दिखावे की न हो। सच्ची दीनता होगी तब हम कहीं कृपा पात्र बनेंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

संतमत में हाथ-पांव से कमाई करने की उत्तमता है। ईश्वर के ही गुणों को देखना चाहिए, अपनाना चाहिए, हृदय में अंकित करना चाहिए और व्यवहार में उनको विकसित होने देना चाहिए। ईश्वरीय गुणों को अपनाना ही साधना है। यही असली ध्यान है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

जो लोग अपने अंदर अवगुण देखते हैं वह भाग्यशाली हैं। अपने अवगुण नज़र आने लगे तो आप ज्ञान की तरफ बढ़ने लगे। अब तप करें। अपने अवगुणों से मुक्त होने का प्रयास, यह तप है।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर के गुण हमारे हृदय में उतरने चाहिए। अपनी मलीनता को धोने के लिये चिन्ता करें। इसीलिये सत्संग का महत्व है। सत्संग में प्रभु की उपमा गाई जाती है, गुणगान किया जाता है। वहाँ से कोई न कोई बात हृदय में अंकित हो जाती है। गुरु के मुख से जो बात निकलती है, यदि उसके प्रति आपको श्रद्धा है तो उसकी बातें आपके हृदय में अंकित होती चली जाती हैं; यह सत्संग का लाभ है।

❖ ❖ ❖ ❖

परमात्मा का रूप "सत्-चित्त-आनंद" और इसके जितने गुण हैं वह सब आप में अंकित हो जायें, यह ध्यान है।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु रूप बनिये, प्रेम रूप बनिये। उससे धीरे धीरे सब अवगुण धुल जाते हैं, और ईश्वर के गुण आ जाते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

जिस तरीके से भी सत्संग में बैठते हैं, परमात्मा का गुणगान करके, उसी प्रकार पाँच सात मिनट के लिये गुरु का मानसिक सत्संग करना चाहिए कि गुरुदेव बैठे हैं, ईश्वर बैठे हैं और उनकी कृपा प्रसादी हम पर बरस रही है। मन ही मन जो उन्होंने 'नाम' दिया है उसे लेते रहें। यह चित्त को स्थिर करने का साधन है। अंत में प्रसाद लेना है। इसके बाद जो अभ्यास आपको बतलाया गया है वह करें।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु और ईश्वर में कोई अंतर नहीं है - यह सत्य है। गुरु कहलाने का उसी को अधिकार है जिसमें परमात्मा के सारे गुण हों। तभी तो परमात्मा में और उसमें कोई अंतर नहीं है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

बार बार गुरु का स्मरण करना या बार बार उनका ध्यान करना इतना ही काफी है। और कुछ करने की ज़रूरत नहीं है।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु-शिष्य का सम्बन्ध नाजुक है परन्तु यदि कोई सच्चा गुरु मिल जाये तो उसमें और परमात्मा में कोई अंतर नहीं। उसकी प्रसादी, उसकी प्रसन्नता तथा उसका एक शब्द "तुम मुक्त हो गये" इतना ही काफी है। साधक को कुछ करने की ज़रूरत नहीं है।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु की वाणी में इतनी शक्ति होती है तभी तो 'गुरु' शब्द की बड़ी महत्ता कही गयी है। उसकी वाणी में सारे विश्व की शक्ति है।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु पूर्ण समर्थ हैं परन्तु सामान्य जीवन जीकर व्यक्तियों को अपने जीवन से उदाहरण देता है, उन्हें शिक्षा देता है कि संसार में रह कर कैसे जिया जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु शिष्य का सम्बंध शब्दों में वर्णन नहीं किया जा सकता है।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर का नाम लेना, या गुरु का नाम लेना एक ही बात है। ईश्वर ही गुरु है और गुरु ही ईश्वर है। उन दोनों में कोई अंतर नहीं है। जैसा भगवान कृष्ण ने गीता में कहा है "ईश्वर स्वयं ही गुरु रूप धारण कर के आता है, ऐसे गुरु की हम पूजा करते हैं तो हम ईश्वर की ही पूजा करते हैं"।

❖ ❖ ❖ ❖

मोह और अहंकार का त्याग करना बहुत कठिन है। हम सब इन्द्रियों के सुखों का त्याग कर सकते हैं परन्तु मोह और अहंकार का त्याग बहुत कठिन है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

जिसके हृदय में सच्ची जिज्ञासा है उसे घबड़ाना नहीं चाहिए। वह पत्थर को भी गुरु बना लेगा तो उसे सालिग्राम की मूर्ति में भी दर्शन होंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

आध्यात्म में कोई धर्म नहीं देखा जाता कि कौन जिज्ञासु हिन्दु है, मुसलमान या सिक्ख है।

❖ ❖ ❖ ❖

भगवान के घर में जाति भेद नहीं है कि वह छोटी जाति का है या बड़ी जाति का। कौन शुद्ध है और कौन ब्राह्मण है। जिसके हृदय में ईश्वर विराजमान है वही ब्राह्मण है।

❖ ❖ ❖ ❖

आध्यात्म के मार्ग में व्यवहार की, विचारों की, साधना की प्रधानता है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

संत प्रसादी भाग-4 से उद्धृत

हमारा पूर्ण जीवन सेवा का रूप बन जाये अर्थात् ईश्वर में लय हो कर कर्मक्षेत्र में जूझें। जो भी कर्म करें, हाथ पाँव से, मन से, वचन से, दूसरे के हित में ही, दूसरे की प्रसन्नता के लिये हों तथा उस कर्म व कर्मफल के साथ कोई आसक्ति न हो। हम किसी प्रकार की आशा न रखें। पूजा के रूप में, सेवा के रूप में, आराधना के रूप में, ईश्वर जैसे स्वयं ही आया हुआ हो प्रत्येक काम हम उसकी सेवा समझ कर करते रहें।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर की या सत्गुरु की कृपा जिस पर होती है, वही इस रास्ते पर चलता है। बिना ईश्वर की कृपा के इस रास्ते पर नहीं चल सकता। और बिना रास्ता चले ईश्वर की प्राप्ति नहीं हो सकती है। इसके लिये ईश्वर की या संतों की कृपा अति आवश्यक है।

❖ ❖ ❖ ❖

जो गुरु के उपदेशों के अनुसार चलता है और अपना जीवन बनाता है; तन, मन, धन उसी का समझते हुए, उसी के आदेशों के अनुसार चलता है, वही सच्ची सेवा है।

❖ ❖ ❖ ❖

अपने जीवन को साधना का रूप बनाना है और सर्वोत्तम सेवा यही है कि गुरु महाराज के आदेशों का बिना किसी संकोच के पालन करना।

❖ ❖ ❖ ❖

हमारे यहाँ की यह रिवायत है बरक़त है, कि जो गुरु के आदेशानुसार चलता है उसका दीन यानी परलोक भी बनता है और दुनिया भी बनती है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

सेवा का दूसरा नाम प्रेम है। सेवा से मन में आनंद मिलता है, एक संतोष मिलता है, तृप्ति मिलती है।

❖ ❖ ❖ ❖

जब तक मन साफ नहीं होगा, निर्मल नहीं होगा, तब तक मन में कोमलता नहीं आ सकती। भीतर में निर्मलता होने से हमारी आत्मा परमात्मा में लय हो जायेगी। हमारे में पूर्ण प्रकाश हो जायेगा। प्रकाश का मतलब है कि आत्मा परमात्मा सत् चित्त आनंद स्वरूप है। प्रेम है, आनंद है, शांति है।

❖ ❖ ❖ ❖

संत का मतलब है 'सत् स्वरूप' अर्थात उसमें और ईश्वर में कोई अंतर नहीं। ईश्वर ही जब इस रूप में आता है उसी को संत कहते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

वही व्यक्ति अभ्यास कर सकता है जो वैरागी है। वैरागी का मतलब है जो बे-राग है, जिसके भीतर में संसार की किसी वस्तु, किसी विचार, किसी व्यक्ति के प्रति कोई आसक्ति यानी मोह नहीं है, त्याग वृत्ति है, सन्यास वृत्ति है। परन्तु इसके साथ अनुराग, ईश्वर के चरणों का प्रेम, उसका अभ्यास, उसी का ध्यान, उसी की प्रशंसा कानों में गूंजती हो, उसी की स्मृति ज़बान पर हो और शरीर का रोम रोम उसी की स्मृति करता हो। भीतर में इन्द्रियों द्वारा, मन द्वारा, बुद्धि द्वारा, केवल प्रभु का ही ध्यान हो। बार बार उसी का ध्यान हो, उसी का विचार हो, उसी का शब्द सुनते रहें, उसी की कीर्ति की उपमा करते रहें। शरीर, मन, बुद्धि, इन्द्रियाँ सब उसी के चरणों में लगी रहें।

❖ ❖ ❖ ❖

बड़ा कठिन है वैरागी बनना, सन्यासी बनना। वैराग्य के साथ अभ्यास यानी प्रभु चरणों में प्रेम होना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

संत प्रसादी भाग-4 से उद्धृत

हमारा पूर्ण जीवन सेवा का रूप बन जाये अर्थात् ईश्वर में लय हो कर कर्मक्षेत्र में जूझें। जो भी कर्म करें, हाथ पाँव से, मन से, ज़बान से, दूसरे के हित में ही, दूसरे की प्रसन्नता के लिये हों तथा उस कर्म व कर्मफल के साथ कोई आसक्ति न हो। हम किसी प्रकार की आशा न रखें। पूजा के रूप में, सेवा के रूप में, आराधना के रूप में, ईश्वर जैसे स्वयं ही आया हुआ हो प्रत्येक काम हम उसकी सेवा समझ कर करते रहें।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर की या सत्गुरु की कृपा जिस पर होती है, वही इस रास्ते पर चलता है। बिना ईश्वर की कृपा के इस रास्ते पर नहीं चल सकता। और बिना रास्ता चले ईश्वर की प्राप्ति नहीं हो सकती है। इसके लिये ईश्वर की या संतों की कृपा अति आवश्यक है।

❖ ❖ ❖ ❖

जो गुरु के उपदेशों के अनुसार चलता है और अपना जीवन बनाता है; तन, मन, धन उसी का समझते हुए, उसी के आदेशों के अनुसार चलता है, वही सच्ची सेवा है।

❖ ❖ ❖ ❖

अपने जीवन को साधना का रूप बनाना है और सर्वोत्तम सेवा यही है कि गुरु महाराज के आदेशों का बिना किसी संकोच के पालन करना।

❖ ❖ ❖ ❖

हमारे यहाँ की यह रिवायत है बरक़त है, कि जो गुरु के आदेशानुसार चलता है उसका दीन यानी परलोक भी बनता है और दुनिया भी बनती है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

सेवा का दूसरा नाम प्रेम है। सेवा से मन में आनंद मिलता है, एक संतोष मिलता है, तृप्ति मिलती है।

❖ ❖ ❖ ❖

जब तक मन साफ नहीं होगा, निर्मल नहीं होगा, तब तक मन में एकाग्रता नहीं आ सकती। भीतर में निर्मलता होने से हमारी आत्मा परमात्मा में रम ही जायेगी। हमारे में पूर्ण प्रकाश हो जायेगा। प्रकाश का अर्थ है कि आत्मा परमात्मा सत् चित्त आनंद स्वरूप है। प्रेम है, आनंद है, शांति है।

❖ ❖ ❖ ❖

संत का अर्थ है 'सत् स्वरूप' अर्थात उसमें और ईश्वर में कोई अंतर नहीं। ईश्वर ही जब इस रूप में आता है उसी को संत कहते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

वही व्यक्ति अभ्यास कर सकता है जो वैरागी है। वैरागी का मतलब है जो बे-राग है, जिसके भीतर में संसार की किसी वस्तु, किसी विचार, किसी व्यक्ति के प्रति कोई आसक्ति यानी मोह नहीं है, त्याग वृत्ति है, सन्यास वृत्ति है। परन्तु इसके साथ अनुराग, ईश्वर के चरणों का प्रेम, उसका अभ्यास, उसी का ध्यान, उसी की प्रशंसा कानों में गूंजती हो, उसी की स्मृति जबान पर हो और शरीर का रोम रोम उसी की स्मृति करता हो। भीतर में इन्द्रियों द्वारा, मन द्वारा, बुद्धि द्वारा, केवल प्रभु का ही ध्यान हो। बार बार उसी का ध्यान हो, उसी का विचार हो, उसी का शब्द सुनते रहें, उसी की कीर्ति की उपमा करते रहें। शरीर, मन, बुद्धि, इन्द्रियाँ सब उसी के चरणों में लगी रहें।

❖ ❖ ❖ ❖

बड़ा कठिन है वैरागी बनना, सन्यासी बनना। वैराग्य के साथ अभ्यास यानी प्रभु चरणों में प्रेम होना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

यह भी एक वैराग्य का साधन है कि अपने पाँचों शरीरों से मोह मुक्त हो जायें यानी यह स्थूल प्राण, मन, बुद्धि और आनंद जो पाँच प्रकार के आवरण हैं उनसे मुक्त हो जायें।

❖ ❖ ❖ ❖

शरीर के साथ वैराग्य करने का मतलब है कि शरीर के जितने दुख-सुख हैं, इन सबका भान न रह जाये। आप स्वयं अपने में आत्मा स्वरूप हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

दुःख सुख दोनों ईश्वर के चरणों में अर्पण करने हैं। अपने आप को आत्मस्थित बनाना है।

❖ ❖ ❖ ❖

जो ईश्वर की गति में अपनी गति को मिला देता है, केवल उसी का उद्धार होता है।

❖ ❖ ❖ ❖

जिस व्यक्ति ने परमात्मा या संत के हुक्म का ज्ञान यानी राज़ी-ब-रज़ा प्राप्त कर लिया, उसमें अहंकार रह ही नहीं सकता, यानी उनके और परमात्मा के बीच कोई दीवार नहीं रहेगी। वह परमात्मा रूप हो जायेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

मन, अहंकार, इच्छाएँ सब कुछ ईश्वर के चरणों में अर्पण करनी होंगी। इनकी अंतःकरण के यज्ञ में आहुति देनी होगी। इन सबसे अपने आप को खाली करना होगा।

❖ ❖ ❖ ❖

संसार दो हैं। एक हमारे शरीर के बाहर, एक शरीर के भीतर। दोनों संसारों का त्याग करना होगा। बाहर का सन्यास तो बड़ी आसानी से हो जाता है, परन्तु भीतर का सन्यास बहुत कठिन है। अपनी कामनाओं को छोड़ना, आशाओं, इच्छाओं का त्याग करना, इन्द्रियों के भोगों में जो सुख व रस है उसका त्याग करना बड़ा ही कठिन

Scanned by CamScanner

है। और सबसे कठिन अपने मन और अहंकार का त्याग करना है। इनका त्याग करके ही तो वैरागी बनेंगे। वैरागी का मतलब सिर्फ बदन पर मिट्टी लगाने से नहीं है, भीतर में वैराग्य उत्पन्न होना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

मनुष्य वही है जो सत्यता के साथ अनुराग रखता हो, सत्यता को पकड़ता है। जो असत्य है उसका त्याग करता है, इसी त्याग में वैराग्य है। दूसरा मतलब है "मोह मुक्त होना"।

❖ ❖ ❖ ❖

पुराने संस्कारों का, पुरानी वृत्तियों का कैसे त्याग करें? उसके भिन्न भिन्न साधन हैं। मुख्य साधन है 'सत्संग' यानी महापुरूषों का सत्संग करें जो सत् स्वरूप हों। उनके बताये हुए रास्ते पर चलें। वह एक ही रास्ता बतलाता है, एक ही साधन बतलाता है, और वह है "प्रेम और ईश्वर प्रेम"।

❖ ❖ ❖ ❖

सच्चा प्रेम उत्पन्न हो जाये तो जो अतीत के आवरण हैं, वृत्तियाँ हैं, संस्कार हैं वे सब उस महान हस्ती में समर्पित हो जाते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर की सच्ची प्रेम अग्नि में ही जीव के संस्कार खत्म हो सकते हैं, अन्यथा इसके अतिरिक्त और कोई साधन नहीं है।

❖ ❖ ❖ ❖

संसार तो उत्तेजना देगा ही, दुःख देगा ही, बुद्धि के संकल्प-विकल्प से भी दुःख-सुख मिलेगा ही। यह सब बातें हमारे सम्मुख हैं। यह बड़ी चुनौती है एक सत्संगी के लिये। इसका वह मुकाबला करता है और इन सब पर विजय प्राप्त करते हुए प्रभु के चरणों तक पहुँचता है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

साधना में जब बैठें तो पहले भजन आदि प्रार्थना पढ़ लेनी चाहिए। उसके बाद अपने मन को एक दो मिनट को देख लेना चाहिये। देखना यह है कि यदि संकल्प विकल्प उठता है तो उठने दीजिये, कुछ मत करिये। संकल्प अच्छे विचार उठता है, उठने दीजिये। केवल देखिये, कोई प्रतिक्रिया मत करिए। सरलता से देखिये, साक्षी रूप हो कर देखिये। एक दो मिनट में जब मन देखता है कि कोई मुझे देख रहा है, तो यह शांत हो जाता है, अंत तक यही साधन करते जाइए।

❖ ❖ ❖ ❖

अंतःकरण निर्मल होने पर भीतर में एक विचित्र आनंद का आभास होता है, उस आनंद में न दुःख रहता है न सुख रहता है, न किसी प्रकार की अपेक्षा रहती है। गंगा की तरह शीतलता का प्रवाह चलता रहता है।

❖ ❖ ❖ ❖

परमात्मा के गुणों को अपनाना होगा, गुरु के चरणों में समर्पण करना होगा। आत्मा के गुणों को अपनाना होगा और वैसा बनना होगा।

❖ ❖ ❖ ❖

सही ढंग से रास्ता चलने वाले को समझ आ जाती है कि यह रुकावट है, वह भाग्यशाली है। परन्तु परमार्थ के रास्ते पर कभी थकावट नहीं आनी चाहिए। यहाँ तक आपको गुरु के दर्शन हो जावें तब भी रास्ता चलते चलिए क्योंकि इसका कोई अंत नहीं है।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर की कृपा तो तभी हो सकती है जब विचारों से मुक्त होने के लिये प्रार्थना करें और प्रयत्न करें। प्रार्थना के साथ विरह उत्पन्न होना चाहिये, व्याकुलता उत्पन्न होनी चाहिये। जब तक विरह और व्याकुलता उत्पन्न नहीं होगी तब तक मन स्थिर नहीं होगा और यह इतना कठिन है कि बिना ईश्वर की कृपा के प्राप्त नहीं होता।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

बार-बार ईश्वर के चरणों में रो-रो कर प्रार्थना करनी चाहिये कि "हे प्रभु! बिना आपकी कृपा के मैं इस भवसागर से पार नहीं हो सकता"। जब तक संस्कार हैं, जब तक संकल्प विकल्प हैं समझ लेना चाहिये भवसागर का किनारा अभी दूर है। इससे पार होने के लिये बार-बार ईश्वर के चरणों में प्रार्थना करते रहना चाहिये। यही गुरु के चरण पकड़ना है। चरण पकड़ने का मतलब है कि हम रोंयें, प्रार्थना करें कि "प्रभु हमसे कुछ नहीं होता, जब तक आपकी दया नहीं होगी, जब तक आपकी कृपा नहीं होगी हमारा उद्धार नहीं होगा" यह सरल तरीका है।

❖ ❖ ❖ ❖

कर्तव्य परायण होना चाहिये। जो व्यक्ति पढ़े लिखे हैं, शास्त्रों के अनुसार उन्हें अपना जीवन बिताना चाहिये। जिन्होंने गुरु धारण किया है उन्हें गुरु के आदेशों का पालन करना चाहिये। जिनमें ये दोनों बातें नहीं हैं उनको भीतर से अपनी आत्मा की आवाज़ सुनना चाहिये।

❖ ❖ ❖ ❖

इन्सान को वर्तमान में रहना चाहिये। जो गुज़र चुका है उसके प्रति खेद नहीं करना चाहिये। कोई आसक्ति नहीं होनी चाहिये। भविष्य के लिये स्वप्न नहीं देखना चाहिये।

❖ ❖ ❖ ❖

मनुष्य का कर्तव्य, गुरु का सत्संग और गुरु का बताया हुआ रास्ता, यानी साधना, ईश्वर का भजन करना, ये तो सब को करना ही है। कर्तव्य का निभाना कठिन है।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर के भजन का मतलब केवल राम राम करना नहीं है। राम राम के साथ प्रेम करना है। प्रेम होगा उनके उपदेशों का पालन करने से। मन बार बार दुनिया की ओर आयेगा। राम के चरणों को छोड़ेगा। बार बार प्रयास करना है कि राम के चरणों में मन लगे।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

जो आप काम करते हैं वह ईश्वर का समझ कर ईश्वर की याद में करें। उसे ही ईश्वर का नाम समझ लीजिये, उसी को साधना समझ लीजिये। कहीं जाने की ज़रूरत नहीं, कहीं भागने की ज़रूरत नहीं है। उसी काम को पूजा का रूप दे दीजिये।

❖ ❖ ❖ ❖

साधना में केवल आँख बंद करके बैठने से ज़्यादा लाभ नहीं होगा। इसके साथ-साथ प्रेम भी ईश्वर के साथ करना होगा। अपने धर्म के अनुसार जीवन व्यतीत करना होगा और निरंतर प्रयास करना होगा। जैसे भगवान ने कहा है कि 'वैराग्य और अभ्यास'। संसार को धीरे धीरे छोड़ते चले जाना है। मन का जो मोह है, संसार से लगाव है, उसको धीरे धीरे छोड़ते चले जाना है और ईश्वर के चरणों को पकड़ने का बार बार अभ्यास करना है।

❖ ❖ ❖ ❖

यदि हमारा गुरु शारीरिक रूप से हमारे पास है तो उसकी सेवा में रोज़ जाना चाहिये। रोज़ नहीं तो सप्ताह में एक बार जायें। सप्ताह में भी नहीं जा सकते तो महीने में एक बार अवश्य जायें।

❖ ❖ ❖ ❖

जीवन के महत्व का मतलब यह है कि परमात्मा ने बड़ी कृपा करके मनुष्य चोला दिया है। इसी में रहते हुये अपना उद्धार करना है। अपने संस्कारों से मुक्त होना है, अपनी वृत्तियों से, आदतों से मुक्त होना है तथा हृदय में आनंद हो, सुख ही सुख हो, शांति ही शांति हो और वह सुख, आनंद रस आपको भी अनुभव करना है एवं उसको बाँटना है। यह हमारा कर्तव्य है। ये हमारे गुरु का आदेश है और हमेशा से महापुरूषों ने ये आदेश दिया है।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रेम ही साधन है। जिज्ञासु व परमात्मा में, जिज्ञासु व गुरु में, योग करने में प्रेम ही सरेस हो, दोनो में प्रेम हो, जिज्ञासु को गुरु के प्रति तथा गुरु को जिज्ञासु के प्रति इतना प्रेम बढ़ता जाये कि दोनों की दुई मिट जाये। यही तो प्रार्थना हम गुरु प्रणाली यानी शजरा में

Scanned by CamScanner

पढ़ते है। यह ज़रूरी नहीं है कि शारीरिक तौर पर नज़दीक हों। मन से नज़दीकी हासिल करनी चाहिए और आपस में आत्मिक एकता हो जानी चाहिए। इस साधन से ही जिज्ञासु को लाभ पहुँचेगा और उनका उद्धार भी होगा। गुरु का ऋण भी उतरेगा। वह भी आपकी सेवा अधिकाधिक करता रहेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

''रसना स्वाद लगी सहज सुख पायो'' मन की रसना तथा मुख की रसना है, दोनों में आनंद होता है। एक क्षण भी खाली न जाये प्रभु की स्मृति के बिना। उसके लिये कुछ मौन साधन करना चाहिए। विरह और विवेक का साधन करना चाहिये।

❖ ❖ ❖ ❖

अभ्यास ऐसा बन जाना चाहिये कि ईश्वर के अतिरिक्त कुछ दिखे ही नहीं। शुरु में अभ्यास करते हैं कि ईश्वर को, गुरु को, भीतर में देखते हैं, मस्तिष्क में देखते हैं किन्तु यह अभ्यास इतना गहरा हो जाये कि चक्षु भीतर बाहर केवल उसी का दर्शन करें।

❖ ❖ ❖ ❖

अपने हृदय में, मस्तिष्क में, जो अनहद हो रहा है, ध्वनि हो रही है, उसे सुनने में दोनों कान लगायें। प्रेम से सुनें, सरलता से सुनें, बाहर की आवाज़ों से कान हटा लीजिये। कानों को बंद कर लें अनहद शब्द सुने। आँखों को बंद कर लें, भगवान के दर्शन करें। मुख को बंद कर लें एवं प्रभु का नाम बड़े प्रेम और आनंद से लें।

❖ ❖ ❖ ❖

विवेक का मतलब है आत्मिकता को पकड़ें और अनात्मिकता को छोड़ें।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर का प्रेम अंकित करें, जनता की सेवा करें, दीनता करूणा का भाव अंकित करें। आगे चल कर बुरे विचारों का तो त्याग करना ही है, अच्छे विचारों का भी त्याग करें। केवल आत्मा, परमात्मा और गुरु ही रहे।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

साधना में उस स्थान पर बैठें जहाँ का वायुमंडल सहयोगी हो, प्रेरणा देने वाला हो, महापुरूषों की तस्वीरें लगी हों।

❖ ❖ ❖ ❖

भीतर में सहनशीलता, संतोष, क्षमा, दीनता हो। यदि नहीं है तो प्रभु के चरणों में बैठ कर शबरी की तरह भीख माँगे और उसकी कृपा की प्रतीक्षा करें। निज कृपा हो तो, प्रभु की कृपा बाद में होगी। बर्तन को निर्मल करना होगा, प्रभु की कृपा के योग्य बनाना होगा।

❖ ❖ ❖ ❖

साधना आरम्भ करने से पहले भीतर में शांति हो और सच्ची जिज्ञासा हो प्रभु के मिलने की, पुकारने का, बुलाने का ढंग आता हो, अन्यथा हमारी साधना एक मशीन की तरह होती है।

❖ ❖ ❖ ❖

जब बोलने पर प्रतिबंध लगायेंगे (भीतर का बोलना और बाहर का बोलना दोनों पर प्रतिबंध) तो मन भीतर से चुप होता चला जायेगा। तभी इस स्थिति पर आ सकेगा कि किसी प्रकार की आशा संसार से नहीं है, तृप्ति है, पूर्ण संतोष है। उस संतोष में, उस तृप्ति में जो मौन साधना होगी वह आनंद की साधना होगी।

❖ ❖ ❖ ❖

यह रास्ता शब्दों का नहीं है। यहाँ आकर तीनों गुण खत्म हो जाते हैं। भक्ति में जो नौ प्रकार के भाव हैं, वे भी खत्म हो जाते हैं। आत्मा पर पाँच आवरण हैं, वे भी खत्म हो जाते हैं। शुद्ध, निर्मल आत्मा सच्चिदानंद स्वरूप रह जाती है।

❖ ❖ ❖ ❖

आत्मविद्या में शब्दों के उपयोग की आवश्यकता नहीं है। आत्म देश में पहुँचने के लिये गंगा स्नान करना चाहिये अर्थात निर्मल होना चाहिये। शब्दों से नहीं निर्मल होगे। हमारे भीतर में जन्म जन्मातरों के संस्कार हैं, वे एकदम कैसे निर्मल होंगे। इसलिये मोक्ष का कोई सरल रास्ता नहीं है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

मनुष्य को यह शरीर मिला है कि वह अपने संस्कारों से मुक्त हो, अपने स्वभाव को बदले तथा आत्म दृष्टि हो, उनका चित्त निर्मल हो जाये, वह अधिकारी बन जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

संगम के तो कई अर्थ हैं 'मैं केवल एक ही लेता हूँ, इसकी तीन मुख्य बातें हैं:-

1. सत्संग 2. सेवा 3. सुमिरन। सत्संग जो शास्त्र या महापुरूष कहते हैं वह यह है कि किसी महापुरूष का संग करें। अर्थात् जो ईश्वर से तदरूप हो रहा है, जिसमें ईश्वर के गुण समाये हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

परमात्मा सर्व व्यापक है, उसकी कृपा भगवत प्रसादी प्रत्येक वस्तु पर हर समय हर स्थान पर एक जैसी पड़ रही है। किसी समय, किसी स्थान पर भी इस कृपा की अनुभूति प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है।

❖ ❖ ❖ ❖

थोड़ा सा Relaxed Mood यानी शांत भावना से बैठें, शरीर में किसी प्रकार का तनाव न हो। मन में तनाव नहीं हो, भीतर में प्रार्थना कर रहे हों, अपने आप को ढीला छोड़ दें, हृदय की खिड़की खोल दें। दो चार मिनट बैठें तो आपको कुछ न कुछ अनुभूति होगी। ऐसा लगेगा कि कुछ आनंद सा आ रहा है। भीतर में व सारे शरीर को कुछ छू रहा है। यही साधना करते रहें धीरे धीरे हम ईश्वर के तदरूप हो सकते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर की कृपा संत के हृदय से निकल कर अधिक तीव्र हो जाती हैं, अधिक प्रभाव करती हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

निष्काम भाव से सेवा करें, दूसरों की प्रसन्नता के लिये। अपना कोई स्वार्थ, कोई आशा न हो। कर्म व कर्मफल के साथ कोई आशा न हो। यह तो सेवा का एक रूप है। दूसरी सेवा का रूप है कि जिसका दामन आपने पकड़ा है, जिसकी शरण आपने ली है, उस महापुरूष

Scanned by CamScanner

के आदेश का पालन करना। उससे प्रेम करना, उससे प्रेम करने का अर्थ है उसके आदेशों का पालन करना, यह सर्वोत्तम सेवा है। महापुरूष क्या आदेश देते हैं, वे कोई पैसा नहीं मांगते, कोई हाथ पाँव की सेवा नहीं चाहते, वे केवल कहते हैं, सद्गुणों को अपनाओ, अवगुणों का त्याग करो तथा निरंतर प्रभु की याद में रहो।

❖ ❖ ❖ ❖

अपनी गति को ईश्वर की गति में मिलाना यह दीनता है।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर का स्मरण करना है प्रेम के साथ। जिसका स्मरण कर रहे हैं उसका स्वरूप, उसके गुण, हमारे सम्मुख हों।

❖ ❖ ❖ ❖

अपना उद्धार करना है, संस्कारों से विमुक्त होना है और ईश्वर से तदरूप होना है। जो कोई भी रास्ता आपको अच्छा लगे उसे अपना लें।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु का दर्शन दो तरह का होता है। एक शारीरिक दूसरा मानसिक।

❖ ❖ ❖ ❖

यदि सत्संग शारीरिक नहीं मिलता है तो मानसिक सत्संग का लाभ उठाना चाहिए। मानसिक सत्संग का मतलब है कि हमेशा यह ध्यान रखना चाहिये कि हम गुरु के चरणों में बैठे हैं। उसकी कृपा हम पर बरस रही है। हम उसके चरणों का ध्यान कर रहे हैं। इसको हम स्मरण कहते हैं। ऐसा करने से भगवान की उपस्थिति का अनुभव होने लगेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

जीवन का महत्व यह है कि परमात्मा ने बड़ी कृपा करके यह मनुष्य चोला दिया है। इसी में रहते अपना उद्धार करना है, अर्थात स्वतंत्र होना है, अपने संस्कारों से मुक्त होना है, अपनी वृत्तियों से, आदतों से मुक्त होना है तथा भीतर में आनंद ही आनंद हो, सुख ही सुख हो, शांति ही शांति हो और वह सुख और आनंद का रस स्वयं भी अनुभव करना है एवं उसको बाँटना है। ये हमारे गुरु कर आदेश है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

वह जो अतीत अवस्था है, निराकार अवस्था है जहाँ कोई आकार नहीं, केवल आत्मा ही आत्मा है, सचखंड है परलोक है (तीनों एक ही बात है) जहाँ कोई किसी तरह की बुराई नहीं करता है, न आँख से, न कान से, न मुँह से, न व्यवहार से क्योंकि वह सबको तथा अपने आपको एक ही समझता है। वहाँ द्वैत नहीं है। दुई नहीं है। ईश्वर ही ईश्वर है।

❖ ❖ ❖ ❖

संत लिखते हैं कि केवल दो बाते की जायें 'भक्ति और साधना'। भक्ति अनन्य भक्ति हो, निष्काम हो, कोई इच्छा न हो। केवल अपने इष्ट को परमात्मा को, गुरु को प्रसन्न करना है। इस काम में अपना जीवन लुटा दें। सब कुछ बलिदान कर दें। सेवा करें। देखिये कि हमारे इष्टदेव किस प्रकार खुश होते हैं। उनकी प्रसन्नता प्राप्त करें। साधना का अर्थ है, समाधि में प्रवेश होना, अपने इष्ट के चरणों की रज बनना। उसी रज की अनुभूति होना।

❖ ❖ ❖ ❖

पहले सदाचार को अपनाना चाहिये। यह नींव है। प्रथम इसी को पकड़े रहिये, फिर साधना करें और अनुभूति की ओर बढ़ें। ज्ञान, प्रेम सब कुछ आने के बाद आत्मा की अनुभूति होती है।

❖ ❖ ❖ ❖

यह बुराई, भलाई मन का ही अंधकार रूप है। इससे मुक्त हों। आत्मा व परमात्मा एक है। न बुराई न भलाई। जहाँ बुराई नहीं है, भलाई नहीं है, कर्म नहीं है, कभी बंधन नहीं है, वहीं मोक्ष है। वहीं गुरु का रूप है। वही आपका अपना रूप है। वह आत्मा आपके भीतर में है।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु नहीं मरता है। उसकी प्रसन्नता के लिये प्रार्थना करें। वे आपके पास हैं, आपके भीतर हैं, आपके अंदर हैं। गुरु की सच्ची सेवा यही है कि उनके आदेशों का पालन करें।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

आत्मा की अनुभूति होनी चाहिये ओर उसी अनुभूति से हमारे पापों का नाश होगा, संस्कारों का विनाश होगा। हमें सच्चा सुख मिलेगा। हमें मोक्ष मिलेगा और हमें ईश्वर के दर्शन होंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रेम का पहला साधन है अपने आप को निछावर कर दो। बलिदान कर दो। किस चीज़ कर बलिदान? अपने अहंकार का बलिदान।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु भगवान के आदेश अनुसार हमारा सुबह से लेकर रात तक का जो जीवन हो वह साधना रूप हो।

❖ ❖ ❖ ❖

मन न लगने का मुख्य कारण यही है कि हम स्रोत से दूर चले जाते हैं। आधार से दूर चले जाते हैं। "मैं और मेरे" के राग में अपने आप को दूषित करते हैं और संसार को भी।

❖ ❖ ❖ ❖

वाणी मधुर होनी चाहिए, हो सके तो आत्मा से निकले शब्द हों। वह मधुरता, वह मिठास दूसरों को भी सुख देगी। उससे अधिक आपको सुख देगी।

❖ ❖ ❖ ❖

दीनता हो, दिखावटी नहीं, सच्ची। उस दीनता में ईश्वर प्रेम हो, उसमें मधुरता हो, सत्यता हो, सेवा का भाव हो।

❖ ❖ ❖ ❖

व्यक्तिगत व पारिवारिक शांति अति आवश्यक है साधना के साथ।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर प्राप्ति की राह में पारिवारिक जीवन भी सेवा का हो, सहयोग का हो। यह अति आवश्यक है। आप गुरु की सेवा करें न करें कोई बात नहीं, पारिवारिक सदस्य एक दूसरे की सेवा करें। प्रेम करें, जब परिवार में शांति होगी, तब आप देखेंगे कि पूजा में आनंद ही कुछ और होगा।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

संत प्रसादी भाग-5 से उद्धृत

प्रत्येक भारतवासी को गीता का बारहवाँ अध्याय जबानी याद कर लेना चाहिये। यह अठारहों अध्यायों में सबसे छोटा है। वैसे तो प्रत्येक श्लोक गीता का अपने आप में साधना का सार है, परन्तु बारहवें अध्याय में उनके कहने के अनुसार प्रत्येक व्यकित के लिये सच्चा मार्ग मिल जाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

जीवन मुक्ति का मतलब है लड़ते हुये संस्कार भी धो डालें और बनने भी न दें और भगवान के चरणों में जा कर शीश धर दें। यही बारहवें अध्याय का सार है। समर्पण करें।

❖ ❖ ❖ ❖

इन्द्रियों का जो रसास्वादन है, उस पर व्यक्ति को पूर्णतः विजय प्राप्त करनी है। तत्पश्चात मन ढीला तथा स्थिर होने लगता है, तब भीतर में मौन सधता है। मौन की गहराई में अपनी सुरत को लय करना है। इतना लय कर देना है कि अपनत्व यानी "मैं" और "मेरापन" जिसे अँग्रेज़ी में EGO कहते हैं, अर्थात् ईश्वर से पृथकता का भाव है, खत्म हो जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

ज्ञानी कितना भी बड़ा क्यों न हो जाये उसमें 'अहं ब्रह्मस्मि' का कुछ न कुछ अहंकार अवश्य रह जाता है। सूफियों में "हमाँ अज ओस्त" कहा है, यानी "मैं उसी से हूँ"। कान्ता भाव को सम्मिलित किया है। भक्ति करते करते कान्ता भाव में पहुँच जाना, जैसे राधा जी और कृष्ण का प्रेम था।

❖ ❖ ❖ ❖

भक्त वह है जिसके भीतर में अहंकार की बू न हो, दीनता हो। जो कोई कर्म करे निष्काम भाव से करे। कर्मफल के साथ उसकी आसक्ति न हो एवं इतनी समता हो कि कितने ही दुःख के पहाड़

Scanned by CamScanner

टूट जायें, कितना ही व्यक्ति को सुख मिल जाये, वह अपने इष्टदेव को भूलें नहीं। वह एक ही रस में रहे।

❖ ❖ ❖ ❖

भक्ति करते करते भगवान के गुण आने चाहिये। भगवान का एक गुण है सरलता।

❖ ❖ ❖ ❖

भगवान का रूप क्या है? "आदि सच, जुगादि सच, है भी सच, नानक होसी भी सच" वह निरंतर है, सच है, उसका नाम भी सत्य है। इसीलिये उसको सत्नाम कहते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

शास्त्रों में शिव को ही परमात्मा कहा है। परमात्मा को ही शिव कहा है। वे ही शिव हैं, वे ही शक्ति हैं। शिव में से ही शक्ति निकली है। शिव और शक्ति ही मिल कर भगवान बनते हैं। कोई छोटा नहीं कोई बड़ा नहीं है।

❖ ❖ ❖ ❖

यह जितने लड़ाई झगड़े हैं यह बाहर के हैं। नाम और रूप के हैं। मन को इससे ऊपर उठाना है भक्ति द्वारा, ज्ञान द्वारा, योग द्वारा।

❖ ❖ ❖ ❖

हम लोग जितनी साधना करते हैं उसको जज़्ब करना चाहिए, प्रकट नहीं करना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

सब मलामती ऐसे ही करते हैं, अपने आपको छिपाते हैं। वे ही संत आगे काम करते हैं जिनको ईश्वर से या अपने संतों से आस्था होती है संसार की सेवा करने की। अन्य व्यक्तियों के लिये भगवान का भी यही आदेश है। "अपने आप को छिपाना चाहिये"

❖ ❖ ❖ ❖

जितनी साधना बतलाई गई है उसका सही सार है कि किसी तरह इन संस्कारों से निवृत्ति और स्वतंत्रता प्राप्त हो।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

प्रत्येक सत्संगी का कर्तव्य है कि वह अपने सत्गुरु के गुणों की सुगंधि को चारों ओर फैलाए, अन्यथा वह अपना जीवन एक तरह से व्यर्थ ही गंवा रहा है। हममें और पशु में कोई अंतर नहीं है। हम सब की वृत्ति पशु वृत्ति है।

❖ ❖ ❖ ❖

अपने मन से ही हम फँसते हैं। अपने मन से ही हमें स्वतंत्र होना है।

❖ ❖ ❖ ❖

किसी महापुरूष से जिसने आत्मा का साक्षात्कार कर लिया है या जो तदरूप है, जिसका जीवन बहुत ऊँचा है और पवित्र है, उससे गुरु नाम लें, यही हमारे यहाँ की सनातन रीति है।

❖ ❖ ❖ ❖

वाणी को सुनना भी श्रद्धा से हो, इसी प्रकार पढ़ना भी श्रद्धा से हो, फिर उसका मनन करना, यह भी भक्ति का रूप है। विचार करना और विचार करते करते वाणी की गहराई में तदरूप हो जाना, विद्या हासिल करना, वैसे ही बन जाना। सुने हुए या पढ़े हुए विचार या गुणों को अपने अंतर में रख कर जीवन में उतारना और इसी तरह करते करते लय अवस्था में पहुँच जाना। यह भी एक भक्ति का रूप है और इससे भी उद्धार होता है।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु महाराज कहा करते थे किसी की प्रतिक्रिया नहीं करनी चाहिये।

❖ ❖ ❖ ❖

चाहे आप साधना कर रहे हों, सत्संग में बैठे हों या अन्य काम करते हों, ईश्वर की उपस्थिति का भान आपको निरंतर रहना चाहिए। ईश्वर हमें देख रहा है, गुरुदेव हमें देख रहे हैं। हम सब कर्म उनके सामने कर रहे हैं, यह भान निरंतर एक जैसा रहना चाहिए। इस स्मृति से, इस भाव से, आत्मा और परमात्मा के बीच में जो दीवार

Scanned by CamScanner

है, वह टूट जायेगी। आप और गुरु एक हो जायेगें। अभ्यास करना चाहिए कि परमात्मा है, गुरु की आत्मा है, मेरी आत्मा है। उसकी उपस्थिति का भान निरंतर रहना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु महाराज महात्मा श्रीकृष्ण लाल जी ने लिखा है और बार बार कहा भी करते थे कि गुरु की, ईश्वर की पूजा क्या है? ...उसके गुणों को सराहना, बार बार याद करना। और गुरु या ईश्वर दर्शन क्या है? ...जो ईश्वर या गुरु का स्वरूप है, जो उसके गुण हैं, वही हमारे हो जाने चाहिये।

❖ ❖ ❖ ❖

मन से किसी के प्रति बुरी भावना मत रखिये।

❖ ❖ ❖ ❖

अवगुणों का त्याग करें और सदगुणों को अपनायें। गुणों को अपनाने से समाधि सरलता से बन जायेगी।

❖ ❖ ❖ ❖

हमारे भीतर में न तो क्रोध रहेगा, न अंधकार रहेगा, न मेरापन रहेगा, न कर्तापन रहेगा और न मोह रहेगा। यह जो समाधि होगी उसमें आनंद आयेगा। यह समाधि एक अगरबत्ती की तरह होगी, स्वयं भी सुगंधित है और चारों ओर अपनी सुगंध फैला रही है। इस भान का महत्व समझते हुए गुणों को अपनाने का प्रयास करना है।

❖ ❖ ❖ ❖

भगवान और राधा जी एक हैं परन्तु राधा जी को जो आनंद श्याम से पृथक हो कर आता है, भगवान को पुकारने में आता है, भगवान तुम कहाँ हो, भगवान अपनी मुरली की मधुर आवाज़ सुनाओ। यह कान्ता भाव है। भक्त को इसमें आनंद आता है। ज्ञानी लय अवस्था में मस्त है। भक्त लय अवस्था को प्राप्त करके फिर अलग हो जाता है, यह ऊँची अवस्था है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

हमारे हृदय में कृतज्ञता रहनी चाहिए। शुक्र रहना चाहिए "तू तू" की आवाज़ उठनी चाहिए। 'मैं' की आवाज़ नहीं। 'तू ही तू है ...तू ही तू है' फिर उसी 'तू' में उसके गुण याद करे कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिए। 'तू' कृपानिधि है, 'तू' दयानिधि है। यह तुम्हारी दया ही है कि 'मैं' अवगुणों से मुक्त हो गया हूँ। यह आपकी कृपा है कि मुझे गुरुदेव के दर्शन हुए हैं, उनके चरणों का आश्रय मिला है। इस प्रकार समाधि भी हो, ध्यान में मस्ती भी हो एवं भीतर में कृतज्ञता का भाव भी हो, शांति हो और ईश्वर की निकटता का भान भी हो। ईश्वर समस्याओं का समाधान और मार्ग दर्शन करता है।

❖ ❖ ❖ ❖

मैं बार बार कहता हूँ जड़ समाधि से दूर रहिये, आत्मिक समाधि होनी चाहिए। यह समाधि प्रकाशमय है, इतनी शक्तिशाली है कि साधारण समस्यायें तो महत्व ही नहीं रखती हैं। उस व्यक्ति के अंदर प्रभु की तरह निर्भयता आ जाती है, वह अभय हो जाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

यह देखते रहना चाहिए कि समाधि में प्रभु के गुण हमारे भीतर विकसित हो रहे हैं या नहीं। हमारा व्यवहार कैसा है।

❖ ❖ ❖ ❖

कोशिश करो कि गुरु, आत्मा या परमात्मा के जो गुण हैं वे आप में विकसित हों।

❖ ❖ ❖ ❖

जिसके भीतर में ईश्वर का नाम बस गया है उसके भीतर में संतोष भी आ जाता है। उसको ईश्वर के प्रेम के अतिरिक्त कोई अन्य वस्तु अच्छी लगती ही नहीं है। संतोष अप्रयास ही आ जाता है। इसलिए भीतर में शांति रहती है।

❖ ❖ ❖ ❖

इच्छाएँ ही सब दुखों का कारण हैं। इच्छाओं को कम करना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

हमारा भी कुछ कर्तव्य है। वह है गुरु के प्रति "भय और भाव"। इन दोनों गुणों को अपनाओ। 'भय' का मतलब 'डर' नहीं है। भय का मतलब लज्जा का है। 'भाव' अर्थात गुरु और परमात्मा के प्रति 'प्रेम'। उनके साथ हमारा प्रेम का सम्बंध हो। गुरु हमारे बिना न रह सके, हम गुरु के बिना न रह सकें, ऐसा यह प्रेम होना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रेम का कोई रूप नहीं है कि किस रूप से करें। व्यक्ति का जो मन है वह अपनी अपनी भावनाएँ लिये हुए है। प्रेम से जैसा भी रूप आपके मन को भावे उसी में परमात्मा के दर्शन करें। ज्ञानी निर्गुण, निराकार का ध्यान करता है। वह सोचता है कि ईश्वर न शरीर है, न बुद्धि है, न प्राण है, न आनंद है, परमात्मा तो निर्गुण स्वरूप है।

❖ ❖ ❖ ❖

अधिक बोलने से ईश्वर की उपस्थिति का भान जाता रहता है। सतक्र रहना चाहिए। इसलिये मौन धारण किया जाता है। ईश्वर की उपस्थिति के भान के लिये तीन बातों का होना ज़रूरी है। कम बोलें, किसी की प्रतिक्रिया न करें और अपने अहंकार को कम करते जायें।

❖ ❖ ❖ ❖

बार बार स्वनिरीक्षण करें, स्वाध्याय करें। किसी संत की शरण ग्रहण कर इस मन को उसके समर्पण कर दें। मनन करें। अधिक से अधिक सत्संग करें। मन के एकदम विपरीत चलने का अभ्यास करें। सत्संग भी किसी ऐसे महापुरूष का करें जिसने आत्मसाक्षात्कार कर लिया हो।

❖ ❖ ❖ ❖

जिस तरह से भी आपका मन परमात्मा को समझे या जो भी उसका रूप आपको अच्छा लगे उसके साथ प्रेम के संबंध बढ़ाते जाओ। किसी को उसका, निर्गुण रूप पसंद है, किसी को सगुण रूप। किसी को देवी देवताओं का भाव पसंद होता है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

परमात्मा की प्रसन्नता ही हमारी साधना की सिद्धी है। तभी कहते हैं, "राज़ी-ब-रज़ा", ... "जेही विधि राखे राम, तेहि विधि रहिए"।

❖ ❖ ❖ ❖

हमारे मन व शरीर की प्रत्येक भावना उसी की प्राप्ति की ओर ही बढ़ती हुए लगे। अपने आपको एक पूर्ण, सच्चा साधक बनाओ। सच्चा साधक ही आगे चल कर ईश्वर रूप होता है।

❖ ❖ ❖ ❖

कर्म व उसका फल दोनों को ही परमात्मा के चरणों में अर्पण करना होगा और अपना आत्मिक समर्पण परमात्मा के प्रति करना होगा।

❖ ❖ ❖ ❖

साधारण व्यक्ति के लिये दो रास्ते हैं। एक तो धर्म का रास्ता है, अच्छे कर्म करो अच्छा फल मिलेगा। इस जन्म में भी और अगले जन्म में भी। जो स्वतंत्रता चाहते हैं, मोक्ष चाहते हैं, प्रेम चाहते हैं, तो उन्हें तीनों गुणों यानी राजसिक, तामसिक और सात्विक का त्याग करना होगा। कर्म और कर्म फल का त्याग करना होगा।

❖ ❖ ❖ ❖

जो गुण प्रभु के हैं वे ही आप में हों, केवल मात्रा का फक्र रहे, जैसे कि सागर व बूँद, और सागर विशाल है परन्तु बूँद व सागर के गुणों में साम्यता है।

❖ ❖ ❖ ❖

यह जो प्रभु दर्शन है इसका मतलब ही है कि हमारा रोम रोम प्रभु जैसा बन जाये। हमारे जितने संस्कार हैं वे समाप्त हो जायें। प्रेम के अर्थ भी यही हैं। निर्वाण के अर्थ यही हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

इस क्षेत्र में जिसको चलना है, उसको शक्ति का साथ लेना होगा। प्रकृति माँ को साथ लेना होगा। सहनशीलता हो, धर्म हो, सेवा हो, सहानुभूति हो, यह सब शक्ति की पूजा है। गुणों को साथ लेकर ईश्वर का दर्शन करें।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

जितना आप भीतर चलते चले जायेंगे, उतने आप अपने को स्वच्छ करते चले जायेंगे। उतना ही आप ईश्वर के नज़दीक होते चले जायेंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

जितनी अधिक प्रिय वस्तु होती है उसको परमात्मा जल्दी छीन लेता है।

❖ ❖ ❖ ❖

यह तो लगन ही है जो हमें रास्ता चलाती है, कोई सीमा इस प्रेम को बाँध नहीं सकती। यहाँ सब कुछ मौन में ही हो जाता है। यह प्रेम है।

❖ ❖ ❖ ❖

हम जो कर्म फल भोगते हैं वह अपने ही किये कर्मों का फल भोगते हैं। यदि प्रभु का आश्रय लें, प्रभु के चरणों से तदरूप हो जायें तो प्रभु चाहे हम भले हैं या बुरे वह हमारा आलिंगन कर लेता है। अर्थात् अपना जैसा बना कर हमें स्वतंत्र कर देता है।

❖ ❖ ❖ ❖

यदि हम गुरु, आत्मा, परमात्मा से सच्चा प्रेम करें तो हमारे अवगुण टूट जायेंगे और जितना हम सोचते हैं उससे भी कहीं कम समय में प्रभु के चरणों की रज बन सकते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

पूरे जीवन को ही साधना का रूप बनाना है। सारे दिन की दिनचर्या को ही ईश्वरमय बनाना है। प्रमाद का त्याग करके पुरूषार्थ को अपनाना चाहिए। जीवन का एक ही लक्ष्य है परमात्मा की प्राप्ति या जीवन मुक्ति या संस्कारों के बंधन से मुक्त होना।

❖ ❖ ❖ ❖

एक ही सरल साधन है 'सत्संग'। सत्संग कराने वाला व्यक्ति आत्मा या ईश्वर से तदरूप है तो उसके पास बैठने से ईश्वर की प्रसादी मिलती है, आत्मा की प्रसादी मिलती है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

साधना यही करते रहना चाहिए कि यदि हम ईश्वर के समीप नहीं हो सकते तो किसी महापुरूष का, संत का जितना भी अधिकाधिक हो सके शारीरिक और मानसिक सत्संग करें। हमारे यहाँ संतमत में, गुरुमत में, सिखमत में एक यही साधन है।

❖ ❖ ❖ ❖

यह ज़रूरी नहीं है कि जो गुरु के पास रहता है उसका ही उद्धार होता है। गुरु प्रसादी उसी को मिलती है जो अपना अहंकार खत्म करके जाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

संतमत की विशेषता ही यही है कि गुरु शिष्य का सम्बंध, गुरु शिष्य के प्रेम का संबंध, गुरु शिष्य का योग। जो व्यक्ति गुरु को प्रसन्न कर लेता है, वह ईश्वर की प्राप्ति करता है।

❖ ❖ ❖ ❖

जो अक्षरों का नाम है उसी को 'नाम' कहते हैं। इस नाम के साथ गुरु की प्रसादी है, आत्मा की प्रसादी है, प्रसाद का मतलब है 'कृपा', उसकी 'कृपा' आत्मा के रूप में, गुरु स्वयं भीतर में प्रवेश करता है और उसकी आत्मा के ऊपर के आवरणों को दूर कर सकता है, यही गुरु प्रसादी है। शब्दों की नहीं। शाब्दिक अर्थ नहीं बल्कि आध्यात्मिक अर्थ में लेना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

जो व्यक्ति ज्ञान स्वरूप होता है, वह अज्ञानी नहीं रहता, उसके अहंकार का विनाश हो जाता है। जब अज्ञान का कारण दूर हो जाता है, ज्ञान की प्राप्ति हो जाती है, अहंकार खत्म हो जाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

भक्ति द्वारा या ज्ञान द्वारा जब हम आत्मा की अनुभूति कर लेते हैं, तब अहंकार रहता ही नहीं।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

दीनता का मतलब है अपनत्व को मिटा देना। साधन यही है, गुरु की सेवा, गुरु की संगत।

❖ ❖ ❖ ❖

जब तक हम अपने आप को सबसे छोटा नहीं समझेंगे, हमें प्रभु के दर्शन नहीं हो सकते।

❖ ❖ ❖ ❖

सुमिरनः- इसमें कई बातें आती हैं। ध्यान, सुमिरन, भजन यानी भीतर के कानों से शब्द सुनना, इन चक्षुओं से अपने इष्टदेव के भीतर में दर्शन करना और मन की जिव्हा से अपने प्रीतम की स्मृति करनी। यह सब सुमिरन में आ जाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

सत्संगः- अपने इष्टदेव का संग करना शारीरिक एवं मानसिक।

❖ ❖ ❖ ❖

मानसिक सत्संगः- यदि आपका उनसे प्रेम है तो यही कामना करनी चाहिए कि हम हमेशा उनकी सेवा में बैठे हैं, उनकी कृपा प्रसादी, उनकी कृपा दृष्टि हम पर बरस रही है और हम उसे ग्रहण कर रहे हैं। आप कितनी ही दूर बैठे हों, आपको इस प्रसादी का अनुभूति होगी।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु और परमेश्वर एक ही हैंः- वह कभी मरता नहीं है। सिर्फ चोला ही बदलता है, आत्मा कभी नहीं मरती। गुरु कभी मरता नहीं, वह हमारे अंग संग है।

❖ ❖ ❖ ❖

सब साधनाएँ, सब धर्म, सम्प्रदाय एक ही हैं। क्योंकि समता के बाद आत्मा की अनुभूति होती है, परमात्मा के साथ योग होता है, आगे चल कर।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

भक्ति मार्ग पर चलने वालों की इच्छा व आशा रहती है कि जब वे भगवान की मूर्ति के सामने बैठते हैं, उसकी पूजा करते हैं तो भगवान उनको मूर्ति में प्रकट हो कर मनुष्य रूप में दर्शन देंगे। लोगों ने भगवान के दर्शन मनुष्य रूप में किये हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

पूज्य गुरु महाराज के अनुसार दर्शन यह है कि जैसा परमात्मा है, जो गुण उसके हैं वह जब तक हमारे भीतर में नहीं आ जाते हैं, तब तक हमारी कोई चढ़ाई नहीं हुई। कोई रसाई नहीं है, कोई अनुभूति नहीं है। सब जड़ता है, चाहे शब्द सुनाई देता है, चाहे प्रकाश दीखता है, रूप दीखते हैं वे जड़ हैं ...हमारी कितनी जड़ता खत्म हुई है, कितनी चेतना उत्पन्न हुई है ...यही देखना है।

❖ ❖ ❖ ❖

दर्शन का प्रतीक यह है कि हम ईश्वर स्वरूप बनें, जो ईश्वर के गुण हैं, वही हमारे गुण हो जायें। व्यवहार में भी हों और भीतर में भी विकसित हो जायें।

❖ ❖ ❖ ❖

मैं इसीलिये बार बार कहता हूँ कि गुणों की पूजा करो। गुणों को धारण करो और उन्हें व्यवहार में विकसित करो।

❖ ❖ ❖ ❖

धर्म साधना की नींव है। कोई भी मकान मज़बूत नहीं हो सकता यदि उसकी नींव मज़बूत नहीं है। सार साधना का यही है कि हमारी नींव मज़बूत होनी चाहिए। यम और नियम और धर्म की मज़बूत नींव रखें उस पर साधना का मकान खड़ा करें और प्रयास करते रहें कि आत्मा की अनुभूति हो।

❖ ❖ ❖ ❖

दृढ़ संकल्प के साथ यम और नियम का पालन करें और साथ साथ भीतर की साधना करें। मैं विश्वास दिलाता हूँ कि जो गुण मैंने आपको बताये और जो गुण गुरु महाराज के थे, वे आपमें भी सहज अवस्था में आ सकते हैं और आयेंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

एक परमात्मा ही सच्चा है या उसके भक्त जो उसके चरणों तक पहुँच चुके हैं या पहुँचने वाले हैं, उनके भीतर से प्रेम की विशेष तरंगें, किरणें, रश्मियाँ निकलती हैं। उसके पास श्रद्धा से, विश्वास से बैठना ही काफी होता है।

❖ ❖ ❖ ❖

यदि मनुष्य दुखी होता है तो मन के कारण होता है। ईश्वर किसी को दुख नहीं देता। सतपुरूष किसी को दुख देना नहीं चाहते।

❖ ❖ ❖ ❖

'नाम' सब साधनाओं का सार है। 'नाम' में लय हो जाना ईश्वर से तदरूप हो जाना है। उसकी सारी शक्ति हमारे भीतर में बस जाना या सत्पुरूष के संग बैठ कर उसके साथ तदरूप हो जाना, यह सब 'नाम' का अंतिम चरण है।

❖ ❖ ❖ ❖

'नाम' केवल अक्षर का नाम नहीं है। यह उसके प्रेम का संबंध है, आत्मा का, परमात्मा का सम्बंध है। वही सच्चा 'नाम' है।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रार्थना एक साधन है जिसके द्वारा हम ईश्वर से तदरूप होने के लिये अपने को पेश करते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

बस यही करना है कि अपने इष्टदेव का दामन न छोड़ें। जब तक वह नहीं मिलता है ईश्वर से प्रार्थना करते रहना चाहिए। वे तो सर्वत्र हैं, भीतर भी हैं बाहर भी हैं। या तो वे स्वयं कृपा कर देंगे या आपके पास किसी महापुरूष को भेज देंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

किसी भी कारण, किसी भी परिस्थिति में, किसी भी व्यक्ति के स्वभाव के कारण हमें अशांत नहीं होना चाहिए। कोई व्यक्ति ऐसा नहीं है कि जिसे उत्तेजना न मिले, जिसके सामने दुःख सुख न आये। मनुष्य वही है जो दुःख सुख में शांत रहे।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

भगवान शांत हैं। सत्-चित्त-आनंद हैं। सत्यम् शिवम् सुंदरम् हैं। क्योंकि जब तक मन की शांति नहीं है तब तक मन स्थिर नहीं होगा। और जब तक मन स्थिर नहीं होगा तब तक आत्मा के प्रकाश की अनुभूति नहीं होगी।

❖ ❖ ❖ ❖

चाहे आप किसी प्रकार की साधना करें, किसी प्रकार की भी पद्धति अपनाएँ, ईश्वर के चरणों की ओर बढ़ें, सबका परिणाम सम अवस्था ज़रूर होनी चाहिए। शांति तभी मिलती है जब व्यक्ति समता में रहता है।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरुदेव फरमा रहे हैं कि यदि ईश्वर की गोद में जाना है, तो उसके लिये एक ही साधन है, उसकी प्राप्ति के लिये रोना, विरह और व्याकुलता की स्थिति लानी और त्याग वृत्ति को अपनाना है।

❖ ❖ ❖ ❖

हमारे जीवन का लक्ष्य है कि हम अपनी माँ यानी परमात्मा की गोद में चले जायें। प्रभु के चरणों में चले जायें, अपनी आत्मा का साक्षात्कार कर लें। ईश्वर के दर्शन कर लें। यह सब एक ही बात है। हमारा रास्ता है कि धीरे धीरे धर्म का जीवन व्यतीत करते हुए परमात्मा की प्राप्ति का रास्ता तय करें।

❖ ❖ ❖ ❖

जो व्यक्ति गुरु के सहारे चलता है, वह आज नहीं तो कल, कल नहीं तो परसों 'मोक्ष' पद प्राप्त कर लेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

संसार का त्याग व ईश्वर से प्रेम, यही गुरु महाराज का आदेश है। लक्ष्य याद रहे, यानी ईश्वर से तदरूप होना। उनका ऐसा मार्ग दर्शन है। इस पर हमें चलना है। यह सीधी सड़क नहीं है, बड़े पड़ाव हैं। अन्धकार ही अन्धकार है। गुरु का प्रकाश ले कर चलना है। उसका जीवन ही हमारे लिये प्रकाश है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

गुरु महाराज कहा करते थे कि यह तो काजल की कोठरी है। ऐसा हो ही नहीं सकता कि कोई व्यक्ति काजल की कोठरी से बिना कालोंच लगे बच सके, अछूता निकल सके। ऐसा कोई नहीं होता। माया बहुत बलवान है। यह उनको अधिक प्रभावित करती है जो कुछ आगे बढ़ चुके होते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

माया हमारी परीक्षा लेती रहती है। जीवन भर या अंतिम घड़ी तक लेती रहती है। मरते समय तक लेती रहती है। गुरु का दामन इसीलिये पकड़ा जाता है कि वे हमारी मदद करें।

❖ ❖ ❖ ❖

यह रास्ता है सरलता का, दीनता का, अपनी गलती मानने का, हमारे यहाँ दीनता मुख्य गुण है। व्यक्ति अपनी गलती को बड़ी कठिनाई से मानता है।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु महाराज का प्रवचन है कि अपनी गलतियाँ देखो तथा दूसरों के दोष न देखो। मन की वृत्तिवश, संस्कार वश, हम दूसरों की बुराईयाँ देखते हैं, दूसरों के गुणों को नहीं देखते। उन दोषों से ऊपर, अंदर में, जो आत्मा विराजमान है, परमात्मा विराजमान हैं, उसके दर्शन नहीं करते। कौये की तरह गंदगी पर ही हमारी नज़र है। यह सब नहीं होना चाहिए। इसे छोड़ेगे, तभी मंज़िल तय होगी।

❖ ❖ ❖ ❖

दूसरे के दुख-सुख में मानसिक रूप से शरीक हो कर इस रास्ते पर एकता से चलने का प्रयास करें।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

संत प्रसादी भाग-6 से उद्धृत

मानव जीवन का सबसे प्रमुख उद्देश्य ईश्वर प्राप्ति, अर्थात् ईश्वर के स्वरूप से साक्षात्कार और आत्मा का परमात्मा के चरणों में समर्पित हो जाना है।

❖ ❖ ❖ ❖

परमात्मा की यह विशेष कृपा है कि उसकी कृपा की धार (भिन्न भिन्न मतों में विविध नामों जैसे फ़ैज, अमृत, Grace या भगवत् प्रसादी से जाना जाता है) जो निरंतर प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक कण पर बिना भेदभाव के अविरल बरसती रहती है। 'झिमझिम बरसे अमृत धारा' इस अनुभव की पूर्णतः अभिव्यक्ति हो जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

सूक्ष्म एवं सर्वव्यापक होने के कारण जो धारा निरन्तर प्रवाहित हो रही है, ऐसी आत्मिक शक्ति या आत्म-प्रसादी ही सारी सृष्टि का पालन पोषण कर रही है।

❖ ❖ ❖ ❖

मान्यता यही है कि चिरन्तर अस्तित्व तो मात्र आत्मा और परमात्मा का ही है। शेष जो भी दुःख-सुख भोगते हैं या पाप-पुण्य जो भी होते हैं, वह क्षणिक, अस्थायी, नश्वर एवं भ्रम के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

❖ ❖ ❖ ❖

पूज्य गुरुदेव का कथन है कि हमारे दुःख-सुख का मुख्य कारण हमारे द्वारा निरन्तर बरस रही फ़ैज की अर्थात् परमात्मा की कृपा की धार से विमुख हो जाना है। जब तक हम इस अमृत वृष्टि के सम्मुख रहते हैं, आत्मिक सुख में लीन रहते हैं। परन्तु इस वृष्टि से पृथक होते ही हम अहंकार के स्थान पर अथवा माया के साम्राज्य में आ जाते हैं। परिणाम स्वरूप दैहिक, दैविक एवं भौतिक तापों को भोगते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

सभी सत्संग समागमों में जो लोग अपनी तवज़्जोह यानी सुरत को, इस फ़ैज अर्थात् अमृत धारा को ग्रहण करने में सरलता से लगाते हैं उनका संबंध इस अमृत धारा से जुड़ जाता है। इस अमृत-धारा में अव्यक्त रूप से छिपे सूक्ष्म ईश्वरीय गुण हमारे शरीर के रोम-रोम में प्रवेश करके अद्भुत परिवर्तन लाते हैं। हमारा चित्त भी धीरे-धीरे निर्मल होता जाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

इस अमृत को हम जितना अधिकाधिक ज़ज्ब कर लेंगे, आत्मसात् कर पायेंगे, उतना ही निर्मल होते जायेंगे, हमारे संस्कार समाप्त होते जायेंगे। यह ही भीतर का गंगा स्नान है। जो व्यक्ति इस प्रसादी को ग्रहण कर लेता है वह स्वयं ही फ़ैज या नाम रूप अर्थात् अमृत रूप बन जाता है। उसमें और प्रभु में अंतर या दूरी कम होने लगती है।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रभु सत्य है। मौन साधना द्वारा हम उसी सत्य के रूप को जो परमात्मा का अंश है, हमारी आत्मा को अवसर देते हैं कि वह हमारे रोम-रोम में प्रकाशित हो। अर्थात् हमारी समीपता और संयोग की अनुभूति उस परमात्मा के साथ हो जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रगाढ़ निद्रा जैसी स्थिति ही मौन की स्थिति होती है।

❖ ❖ ❖ ❖

मौन साधना करने के लिए सरल और सहज आसन में निश्चल शरीर, शांत मन और स्थिर बुद्धि से बैठने पर हल्केपन की ऐसी स्थिति आ जायेगी मानो कोई कपड़ा खूँटी पर टँगा हो- वह अपने बल पर नहीं खड़ा है। ऐसी स्थिति में परमात्मा की कृपा-वृष्टि का भान होता है, इस वृष्टि से हमारा शरीर, मन व आत्मा समरस हो जाते हैं। ईश्वर तो अनन्त आनंद स्वरूप है, हमारी दशा भी कुछ देर के लिए आनंद रूप हो जायेगी।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

गुरु के संग और प्रभु के संग में कोई अंतर नहीं है। गुरु भी ईश्वर में लय होकर आपकी सेवा में बैठता है। वह कुछ नहीं करता। उसका शरीर अपने रोम-रोम द्वारा परम पिता परमात्मा के प्रेम की किरणें चारों ओर फैलाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

गुरु के शरीर के द्वारा परमात्मा की कृपा रश्मियाँ जो आप तक पहुँचती हैं वे कुछ अधिक शक्ति, अधिक तेज और वेग लिए हुई होती हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

मौन की साधना के लिए पहले मन को कोमल बनाना है ताकि प्रभु की ओर से जो प्रसादी आ रही है उसे साधक ग्रहण करने योग्य हो सके। प्रभु की भक्ति तो भाव, भावुकता और उपासना से बढ़ेगी। निस्वार्थ सेवा तथा शुभ कार्य एवं सात्विक जीवन भी मौन साधना में सहायक होते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

भक्ति की चरम-सीमा या अंतिम स्थिति, परिणति आत्मा के 'मौन की दशा ही है। मौन साधना द्वारा आत्मा के दर्शन और परमात्मा से तद्रूपता प्राप्त हो पायेगी।

❖ ❖ ❖ ❖

इसी अवस्था की प्राप्ति के लिए ही हमारी प्रार्थना में 'ओउम् सहनाववतु' वाला मंत्र शामिल किया गया है, जिसमें गुरु और शिष्य की साथ-साथ परम पिता परमेश्वर से विनती की गई है कि दोनों की साथ-साथ रक्षा व पालन हो, साथ ही साथ हम शक्ति प्राप्त करें, तेजोमयी विद्या पायें। और अंततः अपनी दुई मिटाकर स्नेह सूत्र में बँध कर एक हो जावें एवं परम लय अवस्था को प्राप्त करें।

❖ ❖ ❖ ❖

मौन-साधना की पात्रता हासिल करने के लिए एक सरल युक्ति का अभ्यास करना उपयोगी सिद्ध हो सकता है और वह युक्ति है- प्रतिक्रिया करने की आदत को त्याग दें।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

कम बोलने में वही व्यक्ति सफल हो सकता है जो प्रतिक्रिया करने की आदत को छोड़ देगा, जिसके लिए विवेक तथा वैराग की साधना भी सहायक होती है।

❖ ❖ ❖ ❖

आत्मा के मौन का आभास तब ही होता है जब मन और बुद्धि दोनों स्थिर हो जाते हैं। आत्मिक मौन को ही वास्तविक मौन कहते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

जब साधक मग्न अर्थात् मौन हो जाता है तभी उसे 'परमनिधि' प्राप्त हो पाती है।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रभु को बाहर ढूँढने कहीं नहीं जाना है। वरन मन एवं अन्य इन्द्रियों को अन्तरमुखी करके, नियंत्रित करके हमारे रोम-रोम में दबी हुई ईश्वरीय सत्ता को प्रकाशित करना ही वास्तविक दर्शन है और इसे करने का वास्तविक साधन भी उपलब्ध है।

❖ ❖ ❖ ❖

साधन करने वाले, आप अपने मन को शांत करिये, अन्य इन्द्रियों को नियमित करिये, आपने भीतर में दबा पड़ा आत्मा-परमात्मा स्वयं प्रकाशित होने लगेगा। वह सचमुच हमारे कण-कण में रोम-रोम में विराजमान है।

❖ ❖ ❖ ❖

शरीर, मन, बुद्धि को स्थिर करते ही आप पायेंगे कि आप तो स्वयं ईश्वर स्वरूप हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

पूज्य गुरुदेव के उपदेश के अनुसार यदि स्तुति करना चाहते हो तो ईश्वर का गुणगान करो, अपनी आत्मा की स्तुति करो, अपने वास्तविक स्वरूप को सराहो, 'प्रभु! मैं तो तुम्हारा ही अंश हूँ'।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

सत्संग और सत्गुरु का लाभ निरंतर रहने से यह आभास संभव हो जाता है- हमारा मन, बुद्धि, विचार स्थिर होने लगते हैं। पूज्य गुरुदेव कृपा करें कि आपके मन, बुद्धि, विचार स्थिर हो जायें, आपकी आत्मा निरंतर प्रकाशित होती रहे एवं आपको अपने स्वरूप का वास्तविक दर्शन हो सके।

❖ ❖ ❖ ❖

परमार्थ का अर्थ है- परम+अर्थ। परम+अर्थ का मतलब है कि हमारे जीवन का लक्ष्य क्या है, उसे जानना और दो शब्दों में वह यह है:- अपने आपको पहचानना, आत्मा की अनुभूति करना, ईश्वर का दर्शन करना।

❖ ❖ ❖ ❖

जिज्ञासु ऐसा हो जैसे चातक, जो कि निरंतर स्वाति बूँद की प्रतीक्षा कर रहा है। वह एक विशेष बूँद का इंतजार कर रहा है, वह अमृत बूँद है- स्वाति बूँद, अमृत की बूँद ताकि वह बूँद उसके मुख में जाये और तृप्ति हो जाये, उद्धार हो जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

परमात्मा का वर्णन नहीं किया जा सकता है, उसकी अनुभूति हो जाती है तब साधक मौन में विलय हो जाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

जिसका विवेक सध गया है वह बोलेगा कम और आवश्यकता के अनुसार बोलेगा, क्योंकि वह जानता है कि अधिक बोलने से शक्ति कम होती है। विवेकी साधक कम बोलता है, और शब्दों का प्रयोग सोच समझकर करता है, जिससे दूसरों को दुःख न पहुँचे। वह मधुरता से बोलेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

विवेक का अंतिम चरण यह है कि हमें आत्मिकता व अनात्मिकता में अंतर मालूम होने लगे। हम आत्मा को पकड़े व अनात्मिकता की बातों का त्याग करते चले जायें। जब यह विवेक सध जाता है तो वैराग्य का साधन शुरु होता है।

❖ ❖ ❖ ❖

राग-द्वेष का नाम ही संसार है। इन दोनों के त्याग से वैराग्य दृढ़ होता है। वैराग्य के साथ अभ्यास करो।

❖ ❖ ❖ ❖

जब इन तीन बातों का अर्थात् विवेक, वैराग्य व शुद्ध अनुराग का अभ्यास करते हैं तब मन सहज में स्थिर होने लगता है।

❖ ❖ ❖ ❖

मन हमेशा संकल्प-विकल्प उठाता रहता है। इस पर कोई नियंत्रण नहीं है। विवेक जब सध जाता है तब व्यक्ति वही विचार उठाता है जिसकी आवश्यकता होती है।

❖ ❖ ❖ ❖

हम हर समय आत्मा की, परमात्मा की, गुरुदेव के चरणों की ओर बढ़ें अन्य सब कुछ त्याग दें। यह हमारी सहज अवस्था बन जाये। संसार की सेवा, प्रेम भाव से ईश्वर की सेवा समझकर करें।

❖ ❖ ❖ ❖

विवेक और वैराग्य सध जाने पर ध्यान का उदय होता है। हम आत्मा की अनुभूति करने लगते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

विवेक और वैराग्य सध जाने से और आत्म स्वरूप के दर्शन हो जाने से स्थिरता आ जाती है और साधक यही चाहता है कि मेरी आत्मा परमात्मा में मिल जाये। ध्यान दृढ़ होता जाता है। जब साधक निरंतर इस अवस्था में रहता है तब वह मोक्ष का अधिकारी बन जाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

मोक्ष का अर्थ है कि जितने भी बंधन हैं उनसे मुक्त हो जाना। जब ज्ञान का सूर्य विकसित होता है, तब मोक्ष के आयाम में प्रवेश करते हैं। वहाँ कोई बंधन नहीं है।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रेम से परमात्मा के चरणों में जाना और उसी के ध्यान में रहना अभ्यास है।

❖ ❖ ❖ ❖

सबके साथ प्रेम का व्यवहार करें। हमारे शब्दों में, हमारी वाणी में, हमारे व्यवहार में मधुरता हो। यदि और कुछ भी नहीं कर सकते हैं तो मधुरता तो बाँट सकते हैं। भगवान ने जिस स्थिति में रखा है उस स्थिति में रहकर, अपने धर्म और कर्तव्य का पालन करते रहें। स्वधर्म का अर्थ यही है कि हमारे परमात्मा ने हमें जो काम सौंपा है उसे बड़ी ईमानदारी के साथ, बड़ी दयानतदारी के साथ करें।

❖ ❖ ❖ ❖

सबसे पहले तामसिकता का त्याग करें, राजसिक गुणों को अपनायें, फिर सात्विकता को पकड़ें और फिर तीनों गुणों को छोड़ दें। यह विवेक और वैराग्य की साधना का अभ्यास करने से संभव है।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रत्येक व्यक्ति धर्म में निष्ठा और विश्वास रखे और धर्म के अनुसार जीवन व्यतीत करते हुए जीवन का असली ध्येय प्राप्त करने में सफलता प्राप्त करे।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

इस संसार में ही स्वर्ग मिल सकता है। इस संसार में ही प्रभु की अनुभूति हो सकती है। यदि सब लोग स्वधर्म का पालन करें तो स्वर्ग जैसे वातावरण का सुख प्राप्त कर लेना कितना आसान काम हो जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

जो आदर्श का जीवन जीता है उसको बलिदान देना ही पड़ता है।

❖ ❖ ❖ ❖

वास्तव में आनन्द या स्वर्ग का सुख कोई दूर नहीं है, हमारे पास ही है। बस ज़रा स्वनिरीक्षण की ज़रूरत है। अपने भीतर में घुसने की ज़रूरत है।

❖ ❖ ❖ ❖

भीतर में जो अहंकार है उसे ईश्वर के चरणों में या गुरु के चरणों में अर्पण कर दें। अपनी मति को छोड़कर गुरु की सन्मति में चलना है।

❖ ❖ ❖ ❖

'ब्रह्म ज्ञानी पर उपकार' अर्थात् ब्रह्मज्ञानी को पता भी नहीं है, परन्तु उसके हृदय से प्रेम का झरना हर समय प्रवाहित होता है। इसी प्रकार परोपकार से आनन्द निकलता है, फैलता है और सबको शीतलता और शांति प्रदान करता है। सबका कल्याण तो प्रभु का विरद है। यह उसका स्वभाव बना हुआ है। हम भी जब ऐसे कर्म करेंगे तो कर्म का फल या संस्कार हमें नहीं छुयेंगे। जो संस्कारों से रहित हो गया वह तो मुक्त हो गया।

❖ ❖ ❖ ❖

निश्चल सरल रूप पर परमात्मा की प्रसन्नता या कृपा बरस सकती है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

परमार्थ में साधक की सफलता के लिए परमात्मा के गुणों को अपनाना बहुत आवश्यक है। एक भी गुण जैसे दीनता, परोपकार, सरलता आदि पूरी तरह आ जायें तो परमार्थी साधक का कल्याण हो जायेगा।

❖ ❖ ❖ ❖

जो गुण परमात्मा के हैं, सत्संगी को उन गुणों को अपनाना होगा तथा व्यवहार में विकसित करना होगा।

❖ ❖ ❖ ❖

परमार्थ में जो लचक होती है वह दीनता के रूप में प्रकट होती है। प्रभु को दीनता बहुत प्रिय है। हमारे व्यवहार में दीनता होनी चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

साधक भले ही शरीर से दुर्बल हो परन्तु मानसिक शक्ति उसमें बहुत होती है, क्योंकि उसके साथ आत्मिक शक्ति होती है।

❖ ❖ ❖ ❖

हमारा आदर्श, हमारा व्यवहार और हमारा जीवन भी उस अकाल पुरुष परम पिता परमात्मा की तरह का हो। चाहे साधना करने वाला स्त्री हो या पुरुष, सबको ईश्वरमय बनना है।

❖ ❖ ❖ ❖

पड़ोसी से प्रेम व्यवहार और सेवा उसी प्रकार करें जैसी अपनी चाहते हैं। पड़ोसी का अर्थ सारा समाज, सारा विश्व है। उसमें मित्र भी आ जाते हैं और शत्रु भी।

❖ ❖ ❖ ❖

भगवान से कहते हैं– 'सब पर दया करो' भगवान कैसे दया करेगा? वह तो हम सबके द्वारा ही दया करेगा। देखना यह है कि हमारी वृत्ति में दया आ गयी है, सहज ही करुणा आ गई है या नहीं।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

संत का संग जो अपनाता है वही सत्संगी कहलाता है। सत्संगी तो वह है जो ईश्वर के गुणों का संग करे, उनको अपनाये, व्यवहार में व्यक्त करे।

❖ ❖ ❖ ❖

मेरा आपसे यही आग्रह है कि क्षमा करना, निन्दा न करना, दीनता और परोपकार जैसे ईश्वरीय गुण अपना लें और सचमुच उन्हें अपने व्यवहार में लायें, तभी परमार्थ में उन्नति होगी।

❖ ❖ ❖ ❖

भक्त को संतुष्ट रहना चाहिए। प्रत्येक स्थिति में उसके भीतर में शांति बनी रहनी चाहिए। बिना एकता के प्रसन्नता या शांति नहीं मिल सकती।

❖ ❖ ❖ ❖

यह जो लोग अपने को सत्संगी कहते हैं, समाज उनको सिर से पैरों तक देखता है कि उसमें कौन सी विशेषता है। विशेषता तो समाज को नज़र नहीं आती, उनका दोष दिखाई दे जाता है।

❖ ❖ ❖ ❖

जीवन सच्चे अर्थों में धार्मिक नहीं होगा, जब तक व्यक्ति भीतर से निर्मल नहीं हो जाता, उसके संस्कार खत्म नहीं हो जाते, उसके भीतर में से द्वन्द और अवगुण खत्म नहीं हो जाते।

❖ ❖ ❖ ❖

सबसे बड़ा अवगुण अहंकार का है, अहंकार के कारण अज्ञान उत्पन्न होता है। अज्ञान के कारण हम मोह में फँस जाते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

सफल होने का एक और सरल रास्ता है। सारे विश्व की चिंता न करें, परन्तु व्यक्ति को अपने सुख के लिए अति आवश्यक है कि वह अपने आपको देखे। भूलकर भी दूसरे की आलोचना न करें, उसके दोष न देखें। यदि दोष देखते हैं तो वो दोष हमारे भी होते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

भीतर में जो भी अवगुण हैं, मलिनता है उसे गंगा के निर्मल जल से धोना है अर्थात् अपने आपको ज्ञान से भीतर में शुद्ध करना है। अपने आपको प्रेम की धारा से पवित्र करना है।

❖ ❖ ❖ ❖

भगवान, ब्रह्म, परमात्मा अगम हैं, वह भी ऐसा बन सकता है। सूर्य की तरह बन सकता है। सतपुरूष भीतर से आत्मा का प्रकाश निकालकर सारे वातावरण में फैलाता है। और यह सहज स्वाभाविक रूप से होता है। ऐसे निर्मल, चरित्रवान लोगों को ही संत कहते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

परमात्मा तो भीतर में है और बाहर में भी है। हमारे लिए तो अति आसान तप यही है कि अपने आपको अधिकारी बनायें, निर्मल करें ताकि हमारी आत्मा और परमात्मा एक हो जायें। भीतर में से हमारा अहंकार निकल जाये।

❖ ❖ ❖ ❖

हम जब स्वनिरीक्षण करेंगे तो निर्मल होते जायेंगे। स्वनिरीक्षण ही साधक का प्रथम महत्वपूर्ण साधन है। अपने भीतर में झाँकना और सुधारना।

❖ ❖ ❖ ❖

आध्यात्मिकता में सरलता के गुण का एक विशेष महत्व है। सरलता उसी व्यक्ति में होती है, जिसके हृदय में राग-द्वेष नहीं होता। जिसके मन में अहंकार चिपका नहीं होता है।

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर के गुणों को स्मरण करना, उनको सराहना, स्तुति करना, ग्रहण करना- ये गुरु या ईश्वर की पूजा है।

❖ ❖ ❖ ❖

धीरे-धीरे दैवी गुण अपने आचरण में अंकित हो जावें अर्थात् जो ईश्वर के गुण हैं वे ही साधक के गुण हो जायें, जो गुरु का रूप है वह ही साधक का रूप हो जाये। दोनों में कोई अंतर न रहे- वह है वास्तविक गुरु दर्शन।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

आध्यात्मिक विद्या में आगे बढ़ने वालों को सेवक बने रहना चाहिए, दास बने रहना चाहिए। साधकों को तो सबसे सरल दीनता की राह अपनानी चाहिए। साधना में और दिनचर्या में समन्वय होना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

जो व्यक्ति निंदा सुनने में आनंद लेता है तो उसका चित्त दूषित होने से उसकी साधना में विघ्न पड़ेगा। साधकों को यदि ऐसी आलोचना हो रही हो तो वहाँ से उठ जाना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

इन्द्रियों के जो विषय हैं उन्हें संयम की सीमा में लाना आवश्यक है। हमारे जो विचार हों, कर्म हों सब उपासनामय होने चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

साधना में खूब आनंद आना चाहिए और छोटे से छोटा काम करने को भी पूजा का रूप बना कर भरपूर आनंद लेना चाहिए। इस भीतर के आनंद की रक्षा करनी पड़ती है। हाँ! ऐसे में ही गुरु देखभाल करता है। वह देखभाल तभी करेगा जब आप उसके आदेश का पालन करेंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

यदि सच्चा संत मिल जाये तो उसके चरणों में बैठ जाना चाहिए, कोई साधन करने की ज़रूरत नहीं है। दीनता से, सरलता से, नम्रता से, बैठना चाहिए। बच्चे की भाँति सरलता हो। माँ को और परमात्मा को सरलता प्रिय है।

❖ ❖ ❖ ❖

जब आत्मिक प्रसादी मिल जाती है तो मन में शांति आ जाती है। ऐसे व्यक्ति के भीतर संत की जो प्रसादी मिलती है उसको ही 'नाम' कहते हैं। जब यह मिल जाती है तो साधक अनुभव करता है कि उसमें शांति है, परमात्मा का स्वरूप है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

संत आत्मा के स्थान पर होता है। सूर्य की तरह उसके प्रकाश की रश्मियाँ अप्रयास ही चारों ओर फैलती रहती हैं। किसी महापुरूष के पास जायें तो भीतर का स्नान करके यानी निर्मल हो कर जायें। हार्दिक समर्पण का भाव लेकर जायें, तो विश्वास रखें आप ईश्वरीय कृपा से मालामाल हो कर ही आयेंगे – खाली नहीं लौटेंगे।

❖ ❖ ❖ ❖

सब मनुष्यों में ईश्वर के दर्शन हों। प्रकृति में भी ईश्वर का दर्शन हो। पशु पक्षियों में भी ईश्वर के दर्शन हों, पत्थर आदि जो सुप्त अवस्था में हैं, उनमें भी ईश्वर के दर्शन हों। हमारे चक्षु सब में एक प्रभु को ही देखें।

❖ ❖ ❖ ❖

परमात्मा का यह एक विशेष गुण है कि जहाँ प्रेम है वहाँ क्षमा और सहनशीलता भी आ जाती है। हम भी राग द्वेष से तभी छूट सकते हैं जब प्रेम को अपनाएँ।

❖ ❖ ❖ ❖

जो कुछ हो रहा है साधक उससे संतुष्ट रहे। इस सब में परमात्मा की लीला, उसकी इच्छा समझकर उसकी लीला के दर्शन करते हुए उसी की मौज में मग्न होता रहे।

❖ ❖ ❖ ❖

विचारों से मुक्त होने के लिये दो मुख्य साधन हैं:

1, प्रायश्चित 2, पश्चाताप

मन का स्वभाव है कि वह बार बार वही गलतियाँ करता रहता है। ऐसी स्थिति में प्रभु से क्षमा माँगनी चाहिए। सर्वप्रथम पश्चाताप करिए, दीनता से रोकर। महापुरूषों ने लिखा है कि एकान्त में बैठ कर खूब रोइए, रो–रो कर अपनी गलतियों पर पश्चाताप करिए, अपने आप को अपने ही आँसुओं से भिगो डालिये और इसी आँसुओं की धार से पापों को धो डालिये।

❖ ❖ ❖ ❖

विचार शून्य मौन में रहने का प्रयास करना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

परमात्मा से प्रेम करें अनुराग द्वारा और संसार से वैराग करें पश्चाताप द्वारा। परमात्मा से अनुराग के लिये हर समय प्रार्थना और आराधना करते रहना चाहिए। प्रार्थना में और आराधना में अपार शक्ति है।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रार्थना में बड़ा बल है। प्रार्थना के बल पर हम कितना कुछ कर सकते हैं। प्रार्थना कर सफलता के लिये कुछ बातों का ध्यान रखना आवश्यक है:

- ईश्वर में पूर्ण विश्वास होना चाहिए कि वे हमारे दुःखों की निवृत्ति करेंगे।
- ऐसा अनुमान करना चाहिए कि जिससे आप प्रार्थना कर रहे हैं, आप उस इष्टदेव या गुरु के चरणों में बैठे हैं और वे आपकी प्रार्थना सुन रहे हैं।
- प्रार्थना हृदय की गहराई से निकलनी चाहिए।
- प्रार्थना उचित होनी चाहिए।
- प्रार्थना करते हुए यह देखें कि हमारी आकाँक्षा पूर्ति से दूसरे को दुख तो नहीं पहुँचेगा। तत्पश्चात ऐसी इच्छा जिसकी प्राप्ति से आपके साथ साथ औरों को भी सुख मिलेगा, उसके लिये प्रार्थना करनी चाहिए।
- सर्वोत्तम प्रार्थना यह है "हे प्रभु! संसार में सबका भला हो"।

ऐसी प्रार्थना से मन निर्मल हो जाता है और जब हम सबके भले के लिये प्रार्थना करते हैं तो भीतर से जो स्वार्थ का संस्कार है, वह समाप्त हो जाता है। धीरे धीरे लोभ, मोह, अहंकार आदि के संस्कार समाप्त हो जाते हैं, एवं सच्ची दीनता व सच्ची सरलता आती जाती है।

❖ ❖ ❖ ❖

दीनता एवं सरलता भी ऐसे गुण हैं जो परमात्मा के चरणों की ओर ले जाते हैं। मनुष्य को प्रार्थना द्वारा सच्चे प्रेम की प्राप्ति होती है।

❖ ❖ ❖ ❖

सच्चा प्रेम क्या है? प्रेम में पवित्रता है, उदारता है, प्रेम में एकता है। प्रेम में विभाजन नहीं है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

जब प्रेम में डूबे साधक में किसी प्रकार की वेदना-संवेदना या अन्य कोई भी भाव तरंग नहीं रहती है तो शरीर, मन, बुद्धि, अहंकार, आत्मा सब परमात्मा में लय हो जाते हैं।

❖ ❖ ❖ ❖

प्रेम परमात्मा से हो तो ऐसे हो जैसे मृग मरुस्थल में जल को खोजने के लिये व्याकुल होता है। उसी प्रकार जिज्ञासु को परमात्मा की खोज में अपने आपको खो देना चाहिए।

❖ ❖ ❖ ❖

हमारे भक्ति मार्ग के सार रूप में दो ही साधन बतलाये गये हैं:- ईश्वर से प्रेम और संसार की सेवा, दीनता के साथ सबमें अपने प्रीतम का स्वरूप देख कर।

❖ ❖ ❖ ❖

अहंकार खत्म हो गया तो आत्मा एकता का व्यवहार करती है। आत्मा में दीनता है। आत्मा में प्रेम है। आत्मा में आनंद है, जीवन है, चेतना है। आत्मा में न जरा है, न रोग है, न मरण।

❖ ❖ ❖ ❖

साधना का मतलब यही है कि स्वनिरीक्षण करते हुए, अपने अवगुणों को देखते हुए उनका त्याग करें। व्रत रखने का और तीर्थों में जाने का भाव यही है।

❖ ❖ ❖ ❖

जिसके भीतर में सच्ची दीनता होती है वह स्वयं भी मग्न रहता है, औरों को भी आनंदित करता है। परमात्मा दीनों में है, उसे दीनता प्रिय है।

❖ ❖ ❖ ❖

वास्तविक ज्ञान यही है कि जितनी भी साधनाएँ बनती हैं - ज्ञान की, कर्म की, भक्ति की, या योग की या सन्यास की - सबका सार यही सिद्ध करता है कि साधक साधना करते करते उस आयाम में पहुँचता है, जहाँ वह अनुभव करता है कि वह और परमात्मा एक हैं। वास्तव में परमात्मा और संसार सब एक हैं। इसी को सत् कहते हैं। सत्नाम का नाम भी सत् है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

गुरु महाराज ने कहा है 'जहाँ अहंकार है वहाँ न तो कोई ईश्वर का प्रेम मिल सकता है न संसार के सुख मिल सकते हैं, न सच्चा नाम मिल सकता है। वहाँ न ही भक्ति ठहर सकती है और न ही सच्चा ज्ञान।'

❖ ❖ ❖ ❖

ईश्वर प्राप्ति का कोई भी रास्ता अपनाएँ पर यदि सदगुणों को नहीं अपनायेंगे, तो आपको सफलता नहीं मिलेगी, भक्ति नहीं मिलेगी।

❖ ❖ ❖ ❖

कोई भी साधना करो सदगुणों को तो अपनाना ही होगा।

❖ ❖ ❖ ❖

शत्रु या विरोध करने वाले के प्रति भी द्वेष भावना न हो।

❖ ❖ ❖ ❖

क्षमा करना उदारता का एक गुण है। वास्तव में क्षमा के गुण द्वारा ही उदारता, सहनशीलता एवं द्वेष न होने के गुण भी साथ साथ आते जाते हैं। यही गुण साधक की उन्नति में सहायक होते हैं क्योंकि इन गुणों के द्वारा ही वह दुई के विचार पर विजय प्राप्त करके प्रभु के स्वरूप का आनंद ले सकता है।

❖ ❖ ❖ ❖

हमारे पास तो पूज्य गुरुदेव की दी हुई 'नाम मंत्र' के जाप की अनुपम निधि ही एक मात्र शक्ति है। उसी अनमोल नाम जप की अपार सूक्ष्म शक्ति का संचयन और संवर्धन, बिना समय खोये हर पल करते जायें। यही समय की पुकार है और आगामी 'नवयुग' की पूर्व संध्या पर मेरी प्रार्थना एवं संदेश है।

❖ ❖ ❖ ❖

Scanned by CamScanner

रामाश्रम सत्संग (गाज़ियाबाद) प्रकाशन

Scanned by CamScanner